प्रकाशक
साहित्य प्रकाशन
स्टेशन रोड, जोधपुर

प्रथम संस्करण सितम्बर १९७३

मूल्य बारह रुपये

आवरण डॉ शांति स्वरूप रावत

मुद्रक
रूपायन प्रेस, बोरुंदा

क्रम

हा तो — शब्दो के जरिये ही आपसी बात-चीत सम्पन्न होती है, चिट्ठी-पत्री मे समाचार लिखे जाते हैं, पत्र पत्रिकाए छपती हैं समस्त प्रशासकीय कार्य शब्दो के द्वारा ही अपनी गति पाता है, राजनैतिक उद्घोषणाए, पच-वर्षीय योजनाए नेताओ के भाषण शब्दो के द्वारा ही अपना स्वरूप ग्रहण करते हैं, मनुष्य के समस्त ज्ञान विज्ञान, धर्म, दर्शन व शास्त्रो का शब्दो की बदौलत से ही आविर्भाव होता है। उपन्यास, कहानी एव कविता का अस्तित्व भी पूर्ण-रूप से शब्दो पर निर्भर करता है। पर साहित्य मे — मुख्यतया कविता जब कलात्मक विधा के रूप मे शब्दो 'के बहाने' अपना रूप ग्रहण करती है तो उस मे प्रयुक्त शब्द केवल शब्द मात्र ही नही रहते — वे शब्दो के अतिरिक्त 'कुछ और' हो जाते हैं। और शब्दो का यह 'कुछ और' होना ही कविता की सार्थकता है। शब्दो का अतिरिक्त गौरव है। और इसी 'कितने-कुछ' की अनुपातिक गहराई व सूक्ष्मता पर ही कविता की श्रेष्ठता निर्भर करती है।

++

पद्य की रचना एक अभ्यास व कारीगरी है। काव्य की रचना एक कला है। प्रेरणा है। प्रतिभा है। कविता का आनद व सत्य शब्दो 'मे निहित' नही होता, शब्दो 'से परे' होता है। अतिरिक्त होता है। शब्दो के माध्यम से चरितार्थ या व्यक्त होने वाली अन्य विधाओ मे शब्द ही 'सब-कुछ' है। आदि भी, अन्त भी। उन मे लक्षित सत्य या झूठ केवल शब्द ही है, जिसे कोई भी शिक्षित व्यक्ति बाच सकता है। पर कविता के सत्य व आनद का रस ग्रहण करने के लिए केवल शिक्षित होना ही पर्याप्त नही है। कविता के शब्दो मे

निहित सत्य को केवल बाचने मात्र से काम नही चलता, उसे समझना पडता है, उसके मम को हृदयगम करना पडता है। तो कविता का सत्य जितना ही शब्द व भाषा से परे होगा, वह उतना ही गहरा, शाश्वत व श्रेष्ठ होगा।

++

शब्दा के 'बहाने' व्यक्त होने वाली काव्य-कला मे शब्द तो एक 'आवरण' मात्र हैं। शब्दा के उस भीने घूघट के भीतर ही सत्य व सौंदय छिपा रहता है। कम म कम आवरण मे अधिक से अधिक सत्य को छिपाने की दक्षता मे ही कला की श्रष्ठता अभिनिहित है। कविता म प्रयुक्त शब्दो क घूघट मे छिपे मम व रस की टीका या अथ करने म हजार गुना शब्दा का कूडा इकट्ठा किया जाय तो भी वह बात नही बन पाती। घूघट मे छिप सत्य को निरावृत करते ही वह लुप्त हो जाता है। इसलिए कविता का अनुवाद सहज-सभव नहीं। वहा शब्दो के बदले शब्दो की हर फेर से काम नही चलता।

कविता म, शब्दा के मूत अवगुठन से अमूत सत्य के इगित की झलक मात्र ही मिलती है। कविता म प्रयुक्त शब्द अपने अस्तित्व के बहाने चिर मौन को व्यजित करते हैं। और मौन की यह व्यजना ही कविता का प्राण है, कला की आत्मा है—जो शब्दा के अवगुठन म अमूत रूप से छिपी रहती है।

++

प्रकृति, वस्तु-जगत एव भाव-जगत की परिवर्धित अभिनता का जो स्वरूप, एतिहासिक क्रम म मनुष्य जान पाया है—जान पायेगा, वही उसका तथाकथित सत्य है। उस तथाकथित सत्य की अमिट मर्यादा है मनुष्य की अपनी भाषा—उसकी समूची अभिनताओ का एक मात्र माध्यम। जो नितात अपर्याप्त है, नितात भ्रामक है।

यथाथ के अस्तित्व का स्वरूप तो सवत्र एक है, पर उसको व्यक्त करने के लिए विभिन भाषाओ मे विभिन्न ही शब्द है। सूरज, चाद बादल, पानी, पत्थर तितली, कबूतर, आम गुलाब, नाक, दात इत्यादि—जो हैं सो हैं—पर मानवीय भाषाओ मे इनके लिए

अलग-अलग शब्द हैं। जो किसी दूसरे भाषा-भाषी के लिए सहज बोध-गम्य नही। तो शब्द सत्य के प्रतीक नही, उसकी विकृति मात्र हैं। विभिन्न भाषाम्रो की विभिन्न विकृतिया।

मानवीय अभिज्ञता के इस विकृत माध्यम के द्वारा अभिव्यजित विकृत सत्य का दभ पिछली तीन-चार शताब्दियों से मनुष्य को काफी गर्वित करता रहा, पर बीसवी शताब्दी की ढलान पर आते आते वह बहुत-कुछ ढल चुका है। धूमिल पड चुका है।

विभिन्न भाषाम्रो मे अभिव्यक्त ज्ञान, विज्ञान, धर्म, शास्त्र, ईश्वर, मीमासा, पथ, वाद इत्यादि सब-कुछ सत्य की भ्राति मूलक स्थापनाए हैं।

तो मनुष्य के ज्ञान-विज्ञान की समस्त विधाए—जिन मे सत्य का आदि व अत केवल शब्द मात्र है—वह सब यथार्थ को जानने की क्रमश भ्रामक अभिज्ञता है। मनुष्य के अहकार का थोथा दावा मात्र है। साफ शब्दो मे कबूल करना चाहे तो भाषाम्रो के माध्यम से उपलब्ध मनुष्य का समस्त ज्ञान-विज्ञान नितात मिथ्या है—क्योकि उसकी सत्यता का प्रमाण मनुष्य की अपनी भ्रामक अभिज्ञता के अलावा और कही से पुष्ट नही होता। विज्ञान की जर्जरित तानाशाही ने अपनी इस दीनता को अब स्वीकार कर लिया है। जो इस तथ्य को नही जानते वे अब भी विज्ञान के दभ से अभिभूत हैं।

निरतर बदलती हुई धारणाम्रो, मान्यताम्रो व स्थापनाम्रो का 'वैज्ञानिक एव सामाजिक क्रम' ही मनुष्य के तथाकथित सत्य की भ्राति का पर्याप्त प्रमाण है। यथार्थ के अस्तित्व व स्थिरता की अपरिवर्तनशीलता और उस से सबधित मानवीय धारणाम्रो का नित्य परिवर्तन क्या मनुष्य की भ्राति को यथेष्ट रूप से उदघाटित नही करता?

++

काव्य-कला मे प्रयुक्त शब्दो के बहाने भ्रामक विकृति के बदले स्वय सत्य प्रतिष्ठापित होता है। यहा शब्द—सत्य के तथाकथित प्रतीक न हो कर स्वय सत्य को धारण किए हुए होते हैं। इसलिए

शब्दों के माध्यम से अपना स्वरूप ग्रहण करने वाली मानवीय विधाओं में केवल काव्य-कला से अनावृत सत्य की व्यंजना किसी भी अन्य विधा में नहीं होती। शब्दों के सीधे जाल से सत्य को नहीं पकड़ा जा सकता। कविता में प्रयुक्त शब्दों की अप्रत्यक्ष शक्ति ही सत्य को थामने में समर्थ होती है। मानवीय जगत में केवल कलाकार ही सत्यद्रष्टा होता है।

किन्तु भाषा के इस अपर्याप्त अक्षम माध्यम के सहारे कवि सत्य-द्रष्टा के इस पद को क्योंकर पाये? प्रश्न बड़ा सीधा है। बड़ा जटिल है!

++

समस्त ज्ञान विज्ञान की उपलब्धियों के बावजूद मानवीय जीवन की यह विडम्बना है कि ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक या विद्वान का बेटा आज भी उतना ही अबोध, निरीह व असहाय पैदा होता है, जितना कि हजारों लाखों वर्ष पूर्व आदिम काल में हुआ करता था। उपयुक्त पारिवारिक व सामाजिक वातावरण के अनुपात में समय के साथ-साथ वह सारी बातें सीखता है। बैठना, खड़ा होना, चलना, तुतलाना, बोलना, पढ़ना लिखना, किसी कला में दक्षता हासिल करना आदि यह सब — वह सब! और इन सब का एक-मात्र माध्यम है — यही अपर्याप्त मानवीय भाषाएं। बोलने की प्रवीणता हासिल करने के बाद मुख्यतः इन्हीं मानवीय भाषाओं के अक्षरबोध की शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है। और तत्पश्चात अपनी अपनी मर्यादित शिक्षा के दायरे में भाषा के माध्यम से प्रचलित ज्ञान-विज्ञान को शनैः शनैः उपलब्ध कराया जाता है। प्रचलित कलात्मक विधाओं से परिचित कराया जाता है। जो सामाजिक रूप से जाना गया है—वह व्यक्ति को सौंपा जाता है। जो सामाजिक ज्ञान की मर्यादा है — वह वैयक्तिक ज्ञान की मर्यादा बन जाती है — अपने अपने शैक्षणिक व अपनी-अपनी योग्यता के सानुपातिक दायरे में। इस सब सामान्यता के बीच अपवाद स्वरूप कुछ अपूर्व प्रतिभाएं भी उद्भूत पड़ती हैं।

शैक्षणिक व निजी योग्यता के विभिन्न दायरों के फलस्वरूप व्यक्ति

की अभिज्ञताए, धारणाए, स्थापनाए, मान्यताए तथा भावनाए भी विभिन्न हुआ करती हैं। एक ही सामाजिक सत्य को हजारो लाखो मनुष्य हजारो लाखो रूपो मे जानते हैं। और अपनी उसी जानकारी को वे अतिम समझने लगते हैं। अपनी अपनी स्थापनाओ को ही एक-मात्र सत्य समझते हैं। पर सच बात तो केवल यही है कि मनुष्य की एक भी धारणा या स्थापना न अतिम है और न एक-मात्र सत्य है। पर अपने अपने सामाजिक दायरे मे जकडे व्यक्ति की विवशता है कि वह अपनी मान्यताओ को अतिम व एक-मात्र सत्य समझ लेता है। चाहे वह व्यक्ति किसी भी पथ या वाद को चलाने वाला हो—चाहे वह अनुगामी हो। प्रवतक व अनुगामी दोनो ही इसी मजबूरी के शिकार होते हैं।

पर इस सचाई तक पहुचने में भाषा के माध्यम से चरिताथ स्थापनाओ की बदलती बैसाखिया चलते रहने क लिए आवश्यक हैं।

स्थापनाओ की बैसाखी को बैसाखी समझ कर उसे ग्रहण करने क बाद निरतर छोडते रहने मे ही मनुष्य की मुक्ति है।

स्थापनाओ को ग्रहण करने के अलावा, किसी भी व्यक्ति का कही भी निस्तार नही है, पर साथ ही साथ उनका परित्याग करने के महत्व को भी समझ लना चाहिए।

कोई भी कवि या कलाकार पूव नियोजित सामाजिक दायरे मे कैद होने के कारण, प्रचलित सामाजिक मान्यताओ से ऊपर नही उठ सकता, मुक्त नही हो सकता। पर प्रतिबद्धताओ की इन अनिवाय बैसाखियो पर लगडाते-लगडाते चल कर ही कवि या कलाकार को उन्ह छोडते रहना चाहिए, तभी वह अपने पावो पर सहज गति से दौड सकेगा। प्रतिबद्धताओ की बैसाखियो से ऊपर उठ सकेगा। उन्मुक्त कला की सष्टि कर सकेगा।

अपने आत्म-मुक्त स्वरूप को प्राप्त करने के लिए सजग कवि को प्रतिबद्धताओ की बैसाखियो का सहारा लेना भी जरूरी है, पर उस से भी ज्यादा जरूरी है उन्हें एक-एक करके छोडते रहना।

कोई भी कलाकार चाहे कितना ही श्रेष्ठ क्यो न हो प्रतिबद्धता

का बधन उसे एक ऊचाई से ऊपर उडने मे सदैव बाधा उपस्थित करता है। उसे नीचे की ओर खीचता है। इसलिए किसी कलाकार को यदि प्रतिबद्ध होना ही है तो अत मे केवल अपने प्रति, अपनी कला के प्रति, अपनी विशुद्ध निष्ठा के प्रति।

कला की अप्रतिबद्ध सृष्टि ही कलाकार की सर्वोच्च जिम्मेवारी है। उसका सर्वोच्च श्रेय है।

कवि या कलाकार के सामाजिक उत्तरदायित्व के नारे का शोर-गुल अब काफी क्षीण पडता जा रहा है। उसका केवल इतना ही महत्व है कि शुरुआत की स्थिति में प्रचलित धारणाओ का वकल्पिक समथन उसके अस्तित्व की लाचारी है। उसे किसी न किसी मा यता मे चिपट कर ही अपनी मुक्ति पानी है।

++

कला की स्वय अपनी सृष्टि ही उसकी श्रष्ठतम सामाजिक उपादेयता है। किसी भी सामाजिक उपयोगिता का माध्यम बनना उसके लिए कतइ शोभा की बात नही। और यो कला की सामाजिक उपादेयता कोई हो भी नही सकती। लिखने के पैन से वक्त-जरूरत पाजामे का नाडा भी डाला जा सकता है पर लिखने की तुलना मे पैन की यह कितनी क्या उपादेयता है!

जीव की प्रारभिक उत्पत्ति व उसकी रक्षा के लिए झिल्ली के ऊपर कठोर आवरण का सरक्षण जरूरी है पर एक समय के इसी जरूरी साचे को तोड कर बाहर निकलने मे ही पछी की मुक्ति है। किसी भी स्थापना की प्रतिबद्धता एक कवि, साहित्यकार या कलाकार के जीवन में केवल इतनी ही उपादेयता रखती है। इस से आगे की उपादेयता को अगीकार करने से पछी की मुक्त उडान म बाधा ही उपस्थित होगी।

पक्षी की तरह उपलब्ध कठोर सरक्षण के रूप मे भाषा व प्रचलित मा यताओ क आमक दायरे को तोड कर ही कवि सत्य की खोज क लिए निस्सीम उ मुक्त गगन में विचरण कर सकता है।

++

'कितने समय तक मैं अपनी कलम को तलवार के समान ताकतवर समझता रहा, पर अब महसूस करता हू कि मैं कितना असमर्थ हू।' जो पॉल सात्र की तरह एक दिन हर कलाकार को यह सचाई महसूस करनी ही चाहिए।

++

यदि किसी बीज को वापिस अनेक नये बीजो के रूप मे फलना है तो अपने परपरागत स्वरूप का मोह छोड कर मिट्टी मे गडना होगा, नष्ट होना होगा — तभी — केवल तभी वह नये बीजों को उत्पन्न कर सकने मे समर्थ होगा। इसी प्रकार यदि कवि को नये रूप मे फलना है, अपनी कला का प्रस्फुटन करना है तो प्राप्त स्वरूप, सस्कार, मान्यता, विचार, भावना व भाषा तक को नष्ट करना पडेगा।

एक बार भाषा के साचे मे ढलने के बाद कोई भी सत्य— सत्य नही रहता वह 'झूठ' बन जाता है। मानवीय भाषा की यही एक-मात्र विडम्बना है कि किसी भी तथ्य को अपने मे ढालने के बाद उसे मिथ्या बना देती है, व्यर्थ बना देती है। कोई भी वाद, धर्म या दर्शन भाषा के रूप मे अपना अस्तित्व ग्रहण करने के बाद सर्वथा अपनी शक्ति खो देता है। पगु बन जाता है। सत्यद्रष्टा कवि के लिए सचाई की इस मर्यादा का समझना भी आवश्यक है। और इसके साथ-साथ भाषा व प्रचलित कलात्मक विधाओ के परे सत्य, सौंदर्य व आनन्द को समझना भी जरूरी है।

++

यथार्थ का भ्रम बहुत अरसे तक वैज्ञानिको व बुद्धिवादियो को छलता रहा है, अब कवि को सत्यद्रष्टा बनने के लिए स्वप्नो की वास्तविकता और मृग-तृष्णा की अमिट ललक के सत्य को समझना होगा। बुद्धिवादियों की गलीज बौद्धिक शक्ति का इस से बडा और क्या प्रमाण चाहिए कि जर्मनी के नाजीवाद व फासिज्म को उन्ही की बुद्धि से ही जन्म मिला था। मानवीय जगत को विध्वस से बचाने के लिए मनुष्य को राजनेता, वैज्ञानिक व बुद्धिवादियो की अपेक्षा अब सत्यद्रष्टा कवि का मुखापेक्षी होना होगा। वह कहा तक इस उत्तर-

दायित्व को निभा पायेगा — यह भविष्य के अंधियारे में छिपा है। और यह तभी सम्भव होगा जब कवि अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को भुला कर केवल अपने में और अपनी कलाकृति में ही खोया रहेगा — उसे न अपने श्रोताओं की, न अपने दर्शकों की और न अपने पाठकों की रचमात्र भी अपेक्षा होगी। कलाकृति की सफलता तब किसी की मुहताज नहीं होगी — न सामाजिक प्रतिष्ठा की, न प्रसिद्धि की, न रसिकों द्वारा अर्जित प्रशंसा की और न आलोचकों की।

आलोचना कविता के मर्म को स्पष्ट न करके उसे दूषित ही करती है।

++

कविता का स्रष्टा तो अकेला कवि ही होता है, पर उसे पढ़ने वाले कई पाठक होते हैं और वे मानसिक स्तर, समझ, भावना, सौंदर्यानुभूति व मर्मज्ञता की विभिन्नता के फलस्वरूप अपनी विभिन्न मानसिक गठन के अनुसार सर्जित एक ही कला कृति को नये-नये रूप में ग्रहण करते हैं और उस से नया ही आनन्द प्राप्त करते हैं।

कोई भी कलाकृति अपनी सर्जन प्रक्रिया में आनन्द रहित होती है। कृति की सम्पूर्णता के बाद आत्म-सम्मोहित कवि अभिभूत भले ही हो जाय, पर पाठक के आनन्द में उसका आनन्द स्वतः मेल नहीं खाता। पाठक का अपना ही निजी आनन्द होता है। काव्य की आलोचना पाठक के आनन्द को निबद्धित कर देती है, उसे झुठला देती है। इसीलिए प्रस्तुत काव्य-पुस्तक की आलोचना के अतिरिक्त मैंने ये कुछ फुटकर बातें कही हैं। और भाषा की लिखावट में अपना स्वरूप प्रतिष्ठापित करने के बाद वे अपनी पवित्रता व अपनी सत्यता को सर्वथा खो चुकी हैं। इस तथ्य की चेतना के बावजूद भी मैं लिखने पढ़ने की भ्रान्ति से कभी मुक्त नहीं हो सकूंगा, मनुष्य जाति के इस अभिशाप से कोई भी व्यक्ति अछूता नहीं रह सकता — यही सब से बड़ी हास्यास्पद विडम्बना है।

विजयदान देथा

शब्दो का घूघट

वचन बद्ध

अब पुन लौटना हू
आ मेरे निबन्ध सरस अलग
भोगे हुए क्षण
तुम्हें यही छोड़ता हू ।

जाता हू यह सोचकर
तुम्हारे पास पुन लौट आऊगा ,
अगर कही अर्थहीन प्रयास के
प्रवाह म बहने से बच पाऊगा ।

कभी कभी इस बीच
याद मुझे आते रहना ,
वचन जो दिया है तुम्ह
उसे बताते रहना ,
धीरे से मेरे मन म
गुनगुनाते रहना ,
गीतों के साज को
हलके से बजाते रहना ।

तर्क भावुकता

तक
ठोस तक सिफ ,
मेरी रग रग मे
जमा है ठडा कठोर बफ ।

तरल भावुक्ता
उसमे बहे कैसे ?
भावुक्ता और तक
साथ साथ रहे कैसे ?

हा अलबत्ता कही कही चट्टानो के मध्य
भावुक्ता चुपचाप बही है,
जो कभी गीत मे
मीड - सी ध्वनित होती है
भावुक्ना वही है ।

आज का आदमी

घर की देहरी पर
जिसे सजाया जिसे रचाया
पर छोड़ गया घर सूना
उस घर की जैसे कल्पना,
जिसका कुछ संदर्भ नहीं आधार नहीं
कोरी वैसी कल्पना।

जो महाकाव्य तो क्या
गीत नहीं मुक्तक तक नहीं
नहीं शब्द भी नहीं
बस एक अक्षर है,
इससे कहीं अधिक हुआ तो बस
एक हस्ताक्षर है।

गीत का औचित्य

यह गलत है
कि जो कुछ घटता है
वह सभी कुछ कहना चाहिए ,
यह तो कुछ ऐसी बात हुई कि
सही गलत जो कुछ भी होता है
उसे चुपचाप सहना चाहिए ,
जिधर भी धार ले जाय
उधर ही बहना चाहिए ।

आखिर कविता कोई
वैयक्तिक दैनन्दिनी तो नहीं ,
महज घटनाओं की बदनी तो नहीं ।

जो घटे
और घटकर मन में छोड़ जाय छाप ,
मन की धड़कनों में
जिसकी बजे पद चाप
जो कहना तो चाहा जाय
पर सहज ही कहा नहीं जाय ,
और जिसकी कशिश कुछ ऐसी हो
कि जिसे कहे बिना
रहा भी न जाय ।

अभिव्यक्ति की खोज

बहुत दिनों से
मैं ढूंढ रहा
वह राग वह स्वर
जो मुझे अभिव्यक्ति देगा,
मेरी टूटती आस्थाओं को
जरूरी भक्ति देगा,
मेरे डूबते साहस को
जरूरी शक्ति देगा,

अभी तक सीधी सरल राह थी
गीतों ने मुझे उन पर
सहज ही चलाया था।
अब रास्ता रोकने कई मोड़ आये हैं,
एक से दिखते हैं
पर जो एक था
उसे कहीं पीछे छोड़ आये हैं,
कभी कभी तो लगता है
जो आज तक था
उसे सम्पूर्णतः तोड़ आये हैं।

मेरे तो राह के साथी
राह के सम्बल
गीत ही रहे हैं,
इन्हीं के सहारे
सत्य
आज तक कहे हैं।

इसलिए अब जो सत्य है
वह मुखर करे—

ऐसे स्वर खोजने पड़ेंगे ,
नहीं तो स्थिरता से अभिशप्त होकर
मेरे गीत निश्चय ही सड़ेंगे ।

क्यो चुप हैं मेरे गीत

मेरे मन से
कभी उमडते थे निर्झर
मीठे गीतो के ,
कभी रोष की आधियों से प्रेरित
प्रचड गीतो का महानाद उठता था ,
तो कभी वेदना से रुद्ध
घुट घुटे
मन्द करुण गीत
बशी से बज उठते थे ,
पर आज
मौन हैं मेरे गीत ।

ऐसा तो नहीं है कि कोई भी हृदय
अब प्रेम से नही जुडते ,
अभी भी बहती तो है ही
अजस्र प्रेम की अशेष मदाकिनी
दोनो ही किनारा को सीचती भिगोती
जीवन को सजोती ,
फिर भी
क्यो हैं मेरे गीत
चुप और उदास ?

ऐसा तो नही है
कि विनाशो के उनचास पवन
अब बहा नही करते ,
हैं अब भी बहुत
जो सहते ही सदा रहते ,
कहने को बहुत विकल

पर जो चुप हैं
कहा नही करते,
अब भी हर मन में घुमडता है
आंधियो का प्रचण्ड वेग
कभी जो सहेजा था,
इन्ही के मौन स्वर को
स्वर दिया था मैंने।
इन्ही के रोष को
मैंने दिशा दिशा म भेजा था,
इन्ही आंधियो ने मन मे आ
मन की बशी को बजाया था,
मेरे मन म जो नपुसक रोष था
उस रोष को सोते से जगाया था।

आज मेरे जीवन के बद कपाटों को
ये आंधिया खटखटाती हैं
झकझोरती हैं,
पर मन क्या सो गया है
या फिर मन का रोष
मर गया है खो गया है ?

ऐसा तो नही है कि
नयन अब रोने नही हैं,
दुखो का उठता है
रौरव घोर
थक गये नयन
पर सोते नहीं हैं।

छलकने को छलकता था
एक ही मन,
मेरे मन मे घुमड आता था
उमडता हुआ सावन,

कौंध उठती थी रह रह
एक तपन एक तड़पन,
अब तो बरसते हैं
अनगिन विकल नयन,
फिर भी क्या
भीगता नहीं मेरे मन का आगन।

मैं एक भीड़ से घिर गया हू
जिस भीड़ से मेरा मन नहीं मिलता,
इस भीड़ के बेमतलब स्वर
सुनने ही नहीं देते
स्नेह की मीठी वशी
या राप का घनघोर रौरव।

इस भीड़ के अनगिन चरणों ने
ढक लिया है
मेरे मन के आगन को,
तभी तो सावन का अनवरत
गिरता हुआ जल
मन के आगन तक पहुच ही नहीं पाता।

डरता हू
कहीं इस भीड़ म घुलकर
स्वरो से अनजाना नहीं हो जाऊ,
भीड़ के शोर को सत्य समझ
भीड़ के शोर मे नहीं खो जाऊ।

मेरे अंतस में कहीं
गीतों का स्रोत है
जैसे भूमिगत जल,
इसके होने का अहसास
न बह सकने की विवशता
मुझे व्यग्र करती है
एक टीस सी मन में समग्र भरती है।

हाय प्रेरणा कब
मन के पोरों में
अपने हाथ डाल
इस स्रोत को उभारेगी
मुझे घुमड़ती व्यथा से उबारेगी!
कब गीतों की जाह्नवी बहा
मैं सबके मन सरसाऊंगा,
ये जो इतने मुरझाये मन हैं
कब उन्हें हरसा पाऊंगा!

तलब

गीता की तलब
बहुत ही अजब
यों तो महीनों तक नहीं आती
पर जब आती है
जब तलक गा नहीं पाती
तब तलब बहुत ही सताती है।

गीत सुनाता हू

लो मैं गीत सुनाता हू
मधु के घट छलकाता हू
सबको मीत बनाता हू ।

गीत सुनाते युग बीते
मेरे कलश नही रीते
जाने कितने दिल जीते
सबकी व्यथा भुलाता हू ।

नयन किसी से सहज मिले
मन मे जैसे फूल खिले
सजे फूल के सिलसिले
ये सौरभ सरसाता हू ।

आज किसी का मन रोया
जैसे चमन चमन रोया
हसता हुआ पवन रोया
इनका मन बहलाता हू ।

जिसकी प्यार सहेली है
जैसे नार नवेली है
जीवन एक पहेली है
मैं इसको सुलझाता हू ।

जुल्म जोर पर आता है
आखें झूठ दिखाता है
न्याय कभी डर जाता है
तब सघष सजाता हू ।

सार्थक गीत

ऐसे गीत नही गाता मैं
जिनका अर्थ नही,
नहीं गीत का एक शब्द भी
मेरा व्यर्थ नही।

पुलक हो एक पलक की भी
गीत से शाश्वत कर देता,
लाख कठो से मुखरित हो
खुशी से मानस भर देता।
मैंने जिस क्षण को जी डाला
मिटा सके उस क्षण को ऐसा काल समर्थ नही।

जुल्म की आधी मे खुलकर
गीत के दीप जलाता हू,
अधेरा शेष नही रह जाय
रात के चीर जलाता हू।
गीत की दीप शिखाओ ने
तनिक भी तम का छोडा शेष विवत नही।

हृदय के सूखे मरुथल मे
गीत की गगा बह आई,
पुन आशाओ से प्लावित
मुरझती मन की अमराई!
मैंने जिस मन को छू डाला
रस की धारा नही बहे सम्भव अनथ नही।

प्रवाह से दूर

गीतो को खोजने
दूर यहा आया हू ।

वो जहा मैं रहता हू
दुख सुख सहता हू
वो तो एक प्रवाह है
जहा लगातार बहता हू ।

वहा समय कहा मिलता है
सोचने का समझने का
गाने का या बजने का
रूठने का या सजने का ।

उस प्रवाह मे जब आया था
तो सोच नही पाया था
इसका प्रबल वेग प्रलयकारी है
जिसकी बहा ले जाने की शक्ति बडी भारी है ।
वहा मैं करता नही कराया जाता हू
वहा मैं जीता नही जिलाया जाता हू ।
भय है किनारो का बोध ही शेष नही रहे
मैं नि सत्व हो जाऊ प्रवाह जो है वही रहे ।
वहा सोच नही पाता हू
इसलिए गीत नही गाता हू ।

सोचो से दूर गीत नही होते हैं
अपनी हस्ती से अलग गीत कहीं होते हैं ।
मन मे कुछ सोच हो तो उसे ढूढ लू गालू
अपनी कोई बात हो तो सुस्ता लू पालू
प्रवाह के वेग से बच अपने को सम्भाल

मेरा कुछ अपना हो वो डूब नहीं जाय उसको बचालू ,
इसलिए वहा से अपने को दूर यहा लाया हू ।

गीतो को खोजने
दूर यहा आया हू ।

अन्यथा

समय के लगाम बाध
सही ओर मोड दे,
विकास को करें जड
उन रूढियो को तोड दे।

दिग्भ्रा त होते आज को
उभरते भविष्य से जोड दे,
गा सके तो गीत ऐसे गा
अन्यथा गीत गाना छोड दे।

गीत खो गये

मुझे गीत गाये हुए
बहुत दिन हो गये,
बहुत पुरानी बात है
जब पल-छिन रो गये,
याद नही पडता
व्यथताओ, व्यस्तताओ मे
कब रात गये गीत सो गये।

दायरे

बहुत छोटे हैं दायरे
मेरे चिंतन के
संघर्षों के,
बहुत सीमित हैं मुहावरे
मेरे दर्दों के,
इसलिए
क्या अर्थ रखते हैं
पैमाने
दिनों के महीनों के वर्षों के।

उन्हीं सीमाओं में बंधी
बहती गीतों की धार,
एक ही कूल से
बंधा गीत का पारावार।

विडम्बना

पडौस के कमरे मे
किसी ने दस्तक दी ,
मैं चौका
समझा मेरा कोई
आया है ,
द्वार खोला
वह बोला
मैं आपके यहा नही
पडौस मे आया हू ,
गीत मेरे
मुझ से ही
ऐसा क्रूर
उपहास क्यो करते हैं ?

अपराधी

मेरा कसूर क्या है
क्यों महसूसता मैं अपने आप को
अपराधी ?
क्या इसीलिए
कि मैं शब्दों को ओढता नहीं
बिछाता नहीं,
उनको अपने से स्वतन्त्र
अनोखे परिधान
पहिनाता नहीं।
वैसे यह कोई कठिन काम नहीं,
मौन शब्दों की बिसात ही क्या है ?
उनसे जो भी चाहा जाय
देंगे व्यक्तव्य
अकिंचन को भी कर देंगे भव्य।

मेरी एक कुंठा
बताई जा सकती है क्रांति,
कुहरे-सी फैलाई जा सकती है
तटहीन भ्रांति।

लेकिन नहीं
मुझ से यह नहीं होगा
या तो होगा ही नहीं
यदि होगा
तो वही जो सही होगा,
क्योंकि शब्दों ने मुझे नहीं
मैंने शब्दों को भोगा।

शब्द और मैं

मेरा यह अपराध है
कि मैं शब्दों को अपने से अलग नही जीता,
उनको गिलास मे भरकर
पानी की तरह नही पीता,
अपनी कुठाओ को क्रांति के परिधान
मैंने नही पहिनाये,
मोर्चे पर अपने आप को झोंके बिना
युद्ध के शखनाद नहीं बजाये।

बिना खुद जले
आग के दरिया नही बहाये,
तूफानो को श्वास मे
घोले बिना
तूफान के वेग नही बरपाये।

खुद तटस्थ रहकर
औरो की तटस्थता को
मैंने नही नकारा,
अपराधी हू
अभिशप्त हू
मैं इस तरह
शब्दो की शतरंज
बुरी तरह हारा!

मेरे छन्द

मेरे छद
शद की माटी क हैं कलश ,
कि जिन मे मिट्टी के घटो के आवेग भाव का जल
करता छलछल ।

अभी नये हैं
इन मे मिट्टी की सौंधी सौंधी गध अभी आती है ,
पनिहारिन कविता इहे शीश पर धर
फलती धरती के गीत अभी गाती है ।

इन कलशो का जल
जो पनिहारिन भर कर लाई है ,
उस पानी का बल
प्यासी धरती को मिल जाये
धरती का अतमन खिल जाये ,
खेतो के बनें दुकूल
धरती की लाज बचाने
खेतों के चीर सहज मिल जायें ।

स्फुरण

जितनी ही बार
मन को सहज स्थिति मे पाता है ,
तो मन म खिलने वाला
गीतो का फूल मुस्कराता है ।

सामजस्य

जब यह धरती हरी होती है
उसकी गोद सूनी नही भरी होती है,
तो लगता है
मेरे गीत
जो सूखे थे हरे हो गये
जो कभी सूने थे
आज घने हो गये

इस धरती मे और मेरे गीत मे
कुछ ऐसा नाता है,
एक मे उभरता है बीज
दूसरे मे उग आता है।

गीत की नियति

मैंने एक दिन गीत का बीज मन मे बोया
और मन को दूर कही
वीराने मे छोड आया,
सोचा
यहा मैं भीड से घिरा रहता हू
भयानक धक्कम-पेल सुवह शाम सहता हू,
इस मे गीत नही पनपेंगे
और कुछ भी पनपे भले,
ये गीत बडे नाजुक हैं
मुरझायेंगे भीड के पैरो तले,
इन्हे भीड से दूर
साफ खुली हवा मिले,
सुहानी धूप इन्हे नहलाये
मद भरी चादनी सहलाये
तो हो सकता है
गीत का मीठा सुहाना फूल खिले,
यह सोच कर
उस दिन
मन मे गीत का बीज बोकर
उस वीराने मे छोड आया था,
बिना मन के
मैं एक प्रवाह मे वहता रहा,
बिना किसी एहसास के
काम की मार को सहता रहा,
इसी उम्मीद म कि विषाक्त जिन्दगी की
जहरीली छाया से बचकर
निश्चय ही गीत का फूल खिलेगा,
और जब कभी

मन को लौटाने जाऊंगा
वा अनायास
खिलता हुआ मुस्कराता हुआ मिलेगा,
और एक दिन जब मै
बडे उत्साह से
गीत का फूल लेने लौटा,
तो पाया
फूल तो फूल
जिन्दगी के स्पर्श से अनछुआ
बीज भी धूल हुआ,
जिन्दगी से अलग रहकर
मन भी सूखा हुआ बबूल हुआ।

अनछुए सूत्र

मेरे गीत म कुछ होना चाहिए
जो आज तक नही हुआ,
मुझे उन अनछुए सूत्रा को छूना चाहिए
जिन्ह आज तक किसी ने नही छुआ।

गीतो मे वो कैसे हो
जिसे मैं न मानू
गीत उसे क्यो स्वीकारेंगे
जब तलक मैं उस अनजाने को न जानू।

जो मेरे मन मे है
वो बीज
फूटता है लेता है अगडाई
गीत मे उभरता है
गूजती जैसे शहनाई।

यह अकुर फूटे तो
फिर उसे सजाने की बात है,
मन मे एक धुन उभरे तो
फिर साज बजाने की बात है।

यह बीज जब मन मे
समायेगा नही पडेगा नही,
जब तक हल का फल
मन म गडेगा नही,
यह गीत कभी बढगा नही।

बीज अगर आकाश से
आकर

यों ही सतह पर पड़ेगा,
तो वह पनपेगा नहीं
केवल सड़ेगा।

सिद्धि

जो
सम्पूर्णत मेरा हो
या सम्पूर्णत औरों का हो
वह गीत का विषय नहीं
विन्यास नहीं,
जो औरों का होकर भी मेरा हो
गीत की लय वही सुहास वही।

समर्थ गीत

गीत मेरे
सबकी धडकनो को सुन
उनकी बात को समझ ,
उनकी धमनियो म वह
उनकी धडकनो मे बज ।

अपने आप बैठे गुनगुनाना व्यथ
अपने आपको अपनी बात का क्या अथ ?
जो सभी की धडकनो मे जा बसे
साथक वही है बात
वही गीत है समथ ।

प्राप्ति

यह आसपास जो सूनापन है
इसने ढूंढ़कर
मुझे लौटा दिया है,
अस्तित्व के विनाशकारी हाथ से
व्यक्तित्व को उबार लिया है।

मेरे सोचने के सदर्भ जो धूमिल पड गये थे
गीतो के स्रोत जो अनबहे होने से सड गये थे,
उन सदर्भों को मैंने फिर जाना है
भूले हुए गीता को फिर से पहचाना है।

यह सच है उन गीता मे पहले की बात अब नही है
मैंने अपनी या औरा की पीर कब सही है ?
कभी जो सही उस पीर को ढूढकर निकाला है
उसी से उजागर यह गीत का उजाला है,
दूर कही दूर बुझते हुए दीप का प्रकाश
पा सका है गीत म हलका सा आभास।

कि मुझको लिखना है एक गीत

मेरे मित्र मुझे कहते हैं
तेरे गीत कहा रहते है ?
इतना समय हो गया
सुनाया नही एक भी नया ।
कि उनको बात बतानी है
कविता मेरी नही कहानी है ,
मन मे मेरे सोये कई प्रसग
कलम को नही लगा है जग ।
इनको कैसे बात कहू
मौन यो क्योकर इतना हू ,
नही हो जाए नाराज
ये मेरे साथी मेरे मीत ।
इसी से लिखना है एक गीत ।

कि पहले किसकी बात लिखू
कि इनसे किसकी बात कहू ?
यहा पर जितने भी हैं लोग
लगा है उन सबको ही रोग ।
ये हैं सभी लोग हैरान
सभी मे छुपा एक शैतान ,
लाख बचने की इनकी चाह
मिलती नही एक पर राह ।
इनको कथा सुनाऊगा
मनो की व्यथा जगाऊगा ,
इन्ही के घर का एक प्रसग
कि जिसकी कथा करू वर्णित

यहा कल आई थी बारात
मदन - दूल्हे को लेकर साथ ,

शचि ने खूब किया शृंगार
द्वार पर झूमे वन्दनवार ।
रूप का सागर लहराया
देह में यौवन सरसाया ,
फुवारा यौवन फूट उठा
अथाह सुख मन में झूम उठा ।
सच में इसी दिवस के लिये
कि जिसके सोलह वर्ष जिये ,
मन में उमडी चाह अथाह
सुख की चरम यही परिणति ।

बाह बनने को आतुर हार
वक्ष कलश में उमडा प्यार ,
होंठ ये मधु के सागर हैं
नयन लज्जा की गागर हैं ।
गाल पर कमल फूल आये
चाल में रूप फिसल जाये ,
रूप के छलके लाख कलश
उठा है यौवन अलस अलस ।
लो ये सधे नयन के बाण
इनसे नहीं किसी का त्राण ,
रूप से दुनिया को जीते
समर्पण लेकिन जिसकी जीत ।

हां यह दुलहन सीता है
राम जिसका मनचीता है ,
रास की रानी राधा है
कि जिसका प्रेम अगाधा है ।
महाकवि की यह शकुन्तल
देह धर आई या मृगल !

नही क्या ढोले की मरवण
प्रम भर जिसका जीवन धन ।
या फिर स्वय प्रीत साकार
मीत का ढूढ रही आकार ।
देह की वीणा पर गुजित
रूप का अजर - अमर सगीत ।

द्वार पर शहनाई बोली
गीत की सरिता सी डोली ,
बहुत से मधुर कण्ठ बोले
हृदय के राज कई खोले ।
कुमकुमी चरण नाचने लगे
पायला के मधु सुर-से पगे ,
खुशी से चहक उठा हर मन
मधुर स्वर से महका आगन ।
किसी ने एक ठिठोली की
फूल की बिखरी लडी लडी ,
सुखों का सावन आया है
बरसने वाली है झड प्रीत ।

द्वार पर क्यो है हाहाकार
राम को सीया नही स्वीकार ।
सभी हैं कहते यही पुकार
'राम को सीया नही स्वीकार ।
नही सोने की लका है
सिया का रूप कलका है'
रूप तो सीता का नश्वर
करे क्या राम रूप लेकर ?
कक्यी भले नही मांगे
दशरथ वचन नही त्यागे ,

'मोल के बिना नही कुछ भी
प्रीत की मुझे शेष परतीत !'

सिया को राघव पाना हो
जनक को मोल चुकाने दो।
सिया की सेज सजाने को
आज मिथिला बिक जाने दो।

राम को राज्य चाहिए ही
सिया को वन मे जाने दो,
रूप यौवन से क्या होगा
इसे वैधव्य सजाने दो।

जिन्दगी होती है नीलाम
चुकाओ दाम मोल लो राम,
राम ने रावण से सीखी
ज्ञान की हार स्वर्ण की जीत।

राम को सिया नही प्यारी
स्वर्ण का मृग ही प्यारा है,
कृष्ण ने कचन की खातिर
सहज राधा को हारा है।

मरवणी बिलख रही ढोला
छोड पुगल को जाता है,
प्रीत की रीत बनी ऐसी
जहा कचन से नाता है।

स्वर्ण की नई निशानी है,
शकुतल अन पहचानी है,
प्रेम की मर्यादा बदली
प्रीत की पलट गई है रीत।

तुम्हारे मन मे ही यह राम
तुम्हारे घर मे यह सीता,

प्रेम के गीत सुनाने का
कि लगता जैसे युग बीता ।
प्रेम का मोल कहा है शेष ?
रूप के बदले सारे वेष
मानवी सारे ही रिश्ते
अथ के घावा से रिसते ।
रूप का गीत चाहते थे
सुनाऊ लेकिन वह कैसे ?
इसी से छद रहे थे मौन
मौन था कविता का सगीत ।

गीत पुराने गा सकता हू

किन्तु तुम्हारी इच्छा हो तो
गीत पुराने गा सकता हू ,
अपने उर को उद्वलित कर मैं तुमको वहला सकता हू ।

उन्मादो को वाध स्वरो मे
आवेगो को लय मे भरकर ,
वैसे मैंने गीत बहुत से
रच डाले हैं सुन्दर सुन्दर ,
[एक दूसरे से बढ बढकर]
अपने इस सयत स्वर द्वारा उनकी होड बता सकता हू ।

उन गीतो की बात न छेडो
उन मे था सकुचाया बचपन ।
बात बात मे रो देता था
घडी घडी म होता उन्मन ,
[पलक पलक म खो जाता मन]
यौवन की सीपी मे भरकर अब सागर लहरा सकता हू ।

इन गीतों को गा गा करके
मैंने तुमको भुला दिया था ,
जब तुम छोड गई तब इनको
मीत हृदय का बना लिया था ।
[धीरे से गुन गुना लिया था]
तुमको खोकर प्यार तुम्हारा इन गीतो मे पा सकता हू ।

अब जाकर समझा हू क्यो है
रोष तुम्हारा इन गीतो पर ,
भुला सका मैं याद तुम्हारी
इन गीतो को ही गा गा कर ,
[अपना मन मिलमा बिलमाकर]
मुश्किल से जो भुला सका वह पीडा पुन जगा सकता हू ।

सदर्भ विहीन

कहने को नही कुछ भी
क्या सुनाऊ गीत ?

क्षण भोगते मुझको
नही मैं भोगता हू क्षण ,
जिसे कह सकू जीना
वह कहा जीवन ?
अस्तित्व से सत्रस्त यह
जीवन बहुत भयभीत ।

कहा है याद उनकी शेष
जो पल कभी बीते ,
जीवन तो निपट सूना
रस घट सभी रीते ।
व्यस्तता की यह अनथक भीड
अपनी कहा परतीत ?

खो गये सदर्भ
अब हू मैं लुटा-सा क्षण ,
जिसका कुछ नही हो अर्थ
ऐसी एक मैं उलझन ,
एक ऐसा स्नेह मैं
कोई न जिसका मीत ।

मेरा प्यार

तुम से सुन्दर तो कविता का कोई विषय नहीं

मुझ से सच है गीत
तुम्हारा गाया नहीं गया,
बात नहीं की किन्तु
प्रीत को मैंने सहज जिया,
शोर मचाकर कह दे ऐसा मेरा प्रणय नहीं।

सहज प्यार से मैंने
पाया प्यार तुम्हारा है,
अपरिमेय यह प्यार
न इसका कूल किनारा है,
सहज प्यार से गहरा विस्तृत कोई निलय नहीं।

इसी प्यार के बूते
मैंने सबको प्यार किया,
इसी प्यार से सजकर
सुन्दर यह ससार पिया,
मिटा सके यह प्यार कि ऐसा कोई प्रलय नहीं।

प्रश्न–उत्तर

प्रश्न तुम्हारा कौन मेरा मीत
उत्तर मेरा कौन नहीं है ?

मैंने सबकी कथा सुनी है
भरसक सबकी व्यथा गुनी है
कहने को तो हैं ये मेरे गीत
सच मे सब की बात कही है ।

कभी किसी को नहीं बिसारा
चाहे कर ही गया किनारा,
खूब सजोई हर मन की प्रीत
तब मन मे रसधार बही है ।

इतनी प्रीत निभाई कैसे ?
इतनी पीर बसाई कैसे ?
सच तो यह है गया इसी से जीत
मैंने गीत की बाह गही है ।

सब की बात

कहने को तो इन गीतों मे मेरे मन की बात है
किन्तु जमाने भर का इन मे सोया झंझावात है ।

मैंने तुमको प्यार किया है जैसे दुनिया करती है
अपने दिल को हार दिया है जैसे दुनिया करती है,
लगन को तो प्रेम कहानी लगती है केवल मेरी
गुथी सभी की प्रेम कहानी इन गीतों के साथ है ।

मैंने भी संघर्ष किये हैं जुल्म सहे अन्याय सहे
अरमानो के मेले मन मे सिसक कर लगे रहे,
किन्तु अकेले मुझ से ही तो जुल्म नही लडने आया
हर जीवन मे कुछ पल आई यह अंधियारी रात है ।

कदम अकेले नही राह पर चलने वाले हैं मेरे
हर मुकाम पर मेरे साथी बैठे हैं डाले डेरे,
कुछ थक कर सुस्ताते हैं पर चलने को आतुर हैं
मेरे मन मे इनके मन मे बसी एक ही बात है ।

कदम उठाना भर बाकी है दौर बदलने वाले हैं
जुल्मों से प्रतिकार सजाने पैर मचलने वाले है,
कौन रोक सकता है मुझको जीत सुनिश्चित है मेरी
मेरे इस महाप्रयाण मे और सैकडो साथ है ।

प्रवासी मन

किसी ने प्रीत जो परसी
तुम्हारी याद लो सरसी,
यह विजन श्रागन
यह प्रवासी मन,
नयन मे उमडा
प्रीत का लघु घन,
हुए पल के चरण बोझिल
यो हर घडी तरसी।

विछोह के क्षण

तुम्हारी याद का सस्पर्श
स्वय सान्निध्य से गहरा ।

तुम्हें पा जो हुआ उद्रेक
न पाकर हो गया व्यतिरेक ,
कि लगता कुछ नही चलता
ठिठक कर समय तक ठहरा ।

अब जब तुम नही हो पास
लीलती-सी जा रही है प्यास ,
अभावो का विकट सत्रास
उदासी दे रही पहरा ।

समर्पित

कर लो मुझे स्वीकार
मैं तुमको समर्पित हू ,
किंचित नही इन्कार
तुम्ह समवेत अर्पित हू ।

तुम्हारे रूप की गरिमा
अहम् के तोडती आलम्ब ,
प्रीत का यह प्रबल पारावार
मैं जिस मे विसर्जित हू ।

तुम्हारे प्यार के सस्पर्श
परिधिया कौनसी अब शेष ?
इतना प्यार का विस्तार
छू अस्तित्व विस्मृत हू ।

तुम्हारी प्रीत मे फलती
सभी की प्रीत चिर सम्यक्
सभी के प्यार का भागी
असीमित और विस्तृत हू ।

निराश मन

समय धरा यह चलती रहती
गगन वायु भी सदा मचलती ,
इन दोना के बीच अवस्थित
मेरी दुनिया रोज बदलती ।

इन चरणा की गति मे मैंने
धरती के चरणो को बाधा ,
चीर गगन की इस छाती को
मैंने सपनो तक को साधा ।

एक लिये विश्वास हृदय मे
मैंने साधे स्वप्न निलय म
हद होती पर इतजार की
भार निराशा का ले कब तक विश्वासो की नाव बहलती ।

टूट गई आशाए दिन की
किया समपण साहस ने भी ,
आज समय की लहरें मुझको
इधर पटकती उधर पटकती ।

मैं गिनता रहता लहरो को
बीते दिन आते प्रहरो को ।
बीच बीच मुस्का उठता हू
एक समय इन लहरो पर थी इच्छा की आनाए चलती ।

गत सपनो की पाल साधकर
चलू समय का उदधि चीरकर ,
पार लगा दू तूफाना को
हत विगत नैय्या के बल पर ।

मोठ काट यौवन रह जाता
उमग उमग साहस कह जाता ,
मैं इतरा कर उठ जाता हू
किन्तु तभी मन के कोने से धीरे से आवाज निकलती ।

सान्त्वना

किसको किसका रहा सहारा ?
अभी साँझ हुई साथ के पंछी अपनी राह गये सब
अभी शेष है रात अँधेरी जाने इतनी रात कटे कब ?
इसी तरह अनमना हुआ तो कैसे इतनी राह कटेगी ?
औरो का सम्बल ले करके
कौन पा सका बोल किनारा ?

एक रात की बात साथ की एक प्रात का साथ बसेरा
होने को इतना ही क्या कम और हुआ क्या तेरा मेरा,
किन्तु बता क्या दोष शिकायत एक साँझ को टूट चले यदि
एक प्रात का एक रात का
यह छोटा सबंध हमारा।

सही बात है तुझे सतायेंगी बातें उन प्रिय प्रातों की
एक एक क्षण एक एक पल याद दिलायेंगे रातो की,
किन्तु बता क्या शेष यही कम याद रह गई पास किसी के ?
साथ सभी ने किया यहा
पर किसने किसको नही बिसारा ?

अद्वैत

आओ
तुम्हें
अपनी बाहों मे बाध
तुम्हारे रस को
मेरी रग रग मे
रोम रोम मे बहा लू।

सारी सृष्टि से
अलग कर
मैं तुम्हे पालू
अपने मे समालू,
मेरा प्यासा मन
इस तरह भरा हो,
सूखता जीवन का चमन
हरा हरा हो।

तुम्हारा प्यार

मुझे तुम से प्यार है
और बहुत प्रखर है,
यद्यपि वह मौन है
नही तनिक मुखर है।

मेरी और उपलब्धिया
अवरोधो को तोड
मुखर होती हैं,
क्योकि मैंने उन्हे औरो से पाया है
दूसरो के साथ भोगी है।

तुम्हारा प्यार एकान्त मेरा है
इसलिए वह नही लेश मुखर,
और क्योकि उसे मैं अकेला भोगता हू
बाटता नही
इसलिए वह
बहुत बहुत प्रखर।

बेटे बेटिया

मेरी ये बेटिया
घर के आगन मे लगे पनपते पेड हैं,
इन से घर भरा भरा रहता है,
मेरा यह आगन सूखता नही
हरा हरा रहता है,
एक दिन ये किसी और आगन
मे जायेंगी,
फिर भी इनकी डाल पर पले
पछी की वाणी
मेरा घर आगन
सरसायगी ।

मेरे ये बेटे
विकसते हुए पछी हैं,
जो पख सवारते है
उड नही सकते इसलिए
बाहर को विवश निहारते हैं,
ज्यो ज्यो ये पख शक्तिमान होगे
ये आगन से कटेंगे,
अलग अलग दिशाओ मे बटेंगे ।

अलगाव

तुमने फिर पूछा
कब आ रहे हो ?
मैं तुम से अलग
था ही कब
जो या बुला रहे हो ।

लेकिन ठीक है
तुम मेरे पास मे हो
सास सास म हो
श्रास उच्छवास मे हो ,
पर मैं तुम्हारे पास थोडे था
तुम्हारे पास तो तुम्हारा रूप था
व्यस्तता थी
यौवन की अलमस्ती थी ,
य तो मैंने तुम्हे पुकार लिया
इसलिए तुम्ह याद आया
कि मैं भी कुछ हू
और तुम से दूर हू ।

परीक्षा

आने की घडी
ज्यो ज्यो आ रही है पास ,
तुम से दूर हूं
हो गया तीव्र यह आभास ।

मन तुम्हारे पास आने को अधिक आकुल
जिन्हे सायास रोका था तृष्णा वह हो गई विह्वल ,
कसता जा रहा है
बधनो का यह मधुर अहसास ।

विलय

मैं झूठ नही बोलूगा
मन मे पाप नही घोलूगा
मर्यादा का दप ग्रौर नही खोलूगा,
मन मे उमडते ग्रावेग
घुमडते जा रहे सवेग,
कह रहे यह बात
धीरे से मैं तुम्हे लूगा
तुम्हे लूगा।

तुम्हारी याद
कटीले काटा सी उग ग्राई है
उस से मैंने नजात नही पाई है,
तुम्हे बाहुग्रो म बाध
तृप्ति लगा।

विजोग

तुम नही हो पास
सब उदास उदास,
अन बुझी यह प्यास
फैलता ही जा रहा सन्त्रास,
अजब-सा आभास
मुरझता सा हास।

भारी हो रहे हैं श्वास
बस एक ही अहसास,
तुम नही हो पास।

तुम नहीं आये

मैंने तुम्हे भेजा निमत्रण
पर तुम नही आये ।

तुम नहीं आये कि यह सुबह सूनी शाम है सूनी
हृदय मे अभावो की कसक अब हो गई दूनी ,
बढे यो याद के साये ।

तुम नही आये प्यासता ही जा रहा है मन
भले ये मेघ बरसें सरसा पर कहा सावन ,
फिर फिर मेघ घिर आये ।

तुम्हारे रूप के वचस्व को स्वीकार करता हू
तुम्हारे प्यार से मैं जिन्दगी मे प्यार भरता हू ,
वह बात कहने मे शम क्यो आये ?

मैं तुम्हारा हू पूरी तरह से मानता हू
मैं तुम्हें समवेत मन से मागता हू
लो तुम्ह ये सत्य बतलाए ।

स्थिति बोध

योजनो दूर से
आ रहा है यह तुम्हारा स्वर,
प्यार के अतिरेक से
जी गया है मर।

दूसरे ही क्षण
दूरियों का यह विकल अहसास,
बहुत जल्दी आ रहा हूं
प्रिय तुम्हारे पास।

मेरा घर

यादो मे घिरा आता सुहाना गेह ।
है नजर आता मुझे वह
सीढियों पर बन्द होता द्वार ,
लहरता जिस मे सुरक्षा का
भरा निस्सीम पारावार ।
जिन्दगी चुकती मगर चुकता नही जो नेह ।

वह सहन के पास का कमरा
भर बाह मे लेता जहा आराम ,
प्रीत की निधूम जलती वर्तिका
आठो पहर निष्काम ।
सब तपिश चुकती बरसता प्यार का जब मेह ।

सुन रहा हू खोलने को
द्वार आती पास वह आहट ,
उमड ओठो पर किया करती
मुझे सकेत नित जो मुस्कराहट ।
पुलक की पावन वही गगा नहायी देह ।

कर रहा महसूस मिलती
जो सहज मे प्रीत नित अभिनव ।
प्यार जो जीता सदा मैं
पर नही करता कभी अनुभव ।
पूणत देता मुझे जो अधर का मधु स्नेह ।

धरती का चाद

वो धरा के चाद का
नभ मे हुआ लो अवतरण ।

जो लजीले नयन अब तक लाज से झुकते
नापते हैं अब गगन की परिधिया ,
सिमटने थे अग अब तक सकुच बाहो म
बाहुओ मे बाध लेंगे आधिया ,
रूप से अभिभूत विस्मित सब दिशाए हैं
नमित हो नक्षत्र नभ के चूमते नाजुक चरण ।

कल्पना मे तारको से सेज सजती थी
सत्य नभ की सेज सज आई ,
छद मे अब तक बताया चाद था जिसको
ली जवानी ने गगन मे अलस अगडाई ,
लो मिलन की रात नभ मे सज गई है
सज गये हैं नव सृजन के उपकरण ।

सजन के मीठे प्रहर मे मौत की रागे
शपथ है नही कोई गाये ,
वैलतीना ने बहाई प्रेम की गगा
शपथ है उस मे न कोई जहर फलाये ,
इस धरा के चाद का यह मिलन हो चिर शाश्वत
लें बलाए चाद तारे और अरुण ।

भूले बिसरे गीत

कभी के भूले बिसरे गीत
याद आते हैं मुझको आज ।

पुलक की भोली किलकारी
किलकमय शैशव का ससार ,
नयन मे चमकी चिनगारी
चकित विस्मय का जो आगार ।
चेहरे याद नही आते
हृदय मे गूंज रही आवाज ।

जवानी की वह मीठी भूल
चाह को प्यार समझ डाला ,
कसक के उभरे इतने शूल
आश को सार समझ पाला ।
प्यार की तृष्णा से आविष्ट
उठाये मैंने जिनके नाज़ ।

मीत की याद सहेजी है
गीत की कडियो मे पोकर ,
लहरती मेरे अतस मे
दद की लडिया म धोकर ।
जगत के मन को लेता मोह
मस्त गीतों का यह अन्दाज ।

विश्वास का सबल

क्योंकि मेरे सामने हरदम किनारा
इसलिए मुझको न भय मझधार।
सागर मे उठे यदि ज्वार तो इस मे नई क्या बात है
झंझा का प्रभजन का उदधि से तो पुराना साथ है,
झंझा भी प्रभजन भी भयानक ज्वार आयेंगे
चलने के बहुत पहले इन्हे मैं कर चुका स्वीकार।

मतलब क्या शिकायत से अगर हो दूर ही मजिल
मजिल तक पहुचने मे कब थी राह की मुश्किल,
कोई राह ऐसी भी जहा मुश्किल नही होती
मिटना शत मिलने की अगर तो भी नही इन्कार।

ली थी साथ रहने की शपथ वो छोड दें तो क्या
ये तूफान ही ता है अगर रुख माड दें तो क्या ?
लगर खोलने तक ही शपथ की बात का मतलब
उसके बाद जाने किस तरफ को ले चले पतवार ?

साथी छोड ही दें टूट ही जाये न क्यो पतवार
जिनका भी रहा विश्वास निकले व्यथ वे आधार,
मैं असहाय बेवस चिर अकेला हो गया फिर भी।
एक अडिग विश्वास है पास पारावार।

जन्म दिन पर

बयालीस वर्ष
इन्होंने मुझे भोगा
या मैंने इन्हें
कौन भोगी हूँ ?

अधिक तो इनमें
मैंने अनायास ही जिये
बहुत थोड़े हैं
जिन्हें जीने के प्रयास
और यत्न किये।

जो अनायास जिये
वे वर्ष
मेरे अपने तो नहीं,
जिन्हें मैंने नियोजित किया हो
वैसे अपने तो नहीं ।

सन्दर्भ तो किसी और के हैं
जो मुझ से अनचाहे ही जुड़ गये
इनके बोझ से
मेरे संकल्प मेरे विश्वास
कुछ झुके
कुछ मुड़ गये।

अंधेरे में मिली ये सीढ़ियाँ
बिना देखे
जिन पर चढ़ा हूँ,
व्यर्थता का एक घना ढेर
जो पैरों के तले

अनायास जमता चला गया
पाता हू उस पर आज खडा हू ।

वास्तव मे
यह मेरी उम्र नही है
किसी और की उम्र मुझ को लगी है,
मेरी उम्र तो
होगी कोई तीन चार वर्ष
मेरे अपने तीन चार आसू
मेरे अपने भोगे
तीन चार हर्ष
थोडे से संघर्ष ।

अस्वीकारी से

मैंने कहा मेरी बात सुनो
तुमने कहा झूठ है ,
क्या झूठ है बात तो तुमने सुनी ही नही
उसकी सत्यता गुनी ही नही ,
नही सुनोगे
नही गुनोगे ।
ऐसा नही है कि सुनलोगे तो
मानना ही पडेगा ,
उसे अस्वीकारने के लिए भी
जानना ही पडेगा ।
मानो मत जानो तो सही
सत्य असत्य को पहिचानो तो सही ,
घटनाओ के बनाये गये
ये अखबारी क्रम ,
सत्य की पहचान देने का
उत्पन्न करते भ्रम ।
सतह पर डूबते रह
गहराइया पहचानने की बात
आवरण के पष्ठ से सब जानने की भाति ।
मैं नही कहता
कि जो मैंने जाना वही सत्य है ।
पर उतनी बात तो है ही
उस मे जानने लायक अवश्य कुछ तथ्य है ।
सत्य तो सान्निध्य से
ही उभरता है ,
वरना सत्य क्या है
मात्र जडता है !

आत्मबोध

अपने आपको पहचानना
बहुत कठिन बात ,
जो आप हैं
वह जानना
बहुत कठिन बात ।

बुद्धि का पैना
नुकीला अस्त्र
हर बात को औचित्य का
पहना गया सुन्दर सुहाना वस्त्र ,
सत्य को निवस्त्र करके
जानना बहुत कठिन बात ।

बहुत निडर होते
जिन्दगी के तथ्य ,
अपनी जरूरत के
लिए मुश्किल नही पर
ढाल लेना कथ्य ,
कथ्य और तथ्य को सत्य के परिप्रक्ष्य मे
ढालना बहुत कठिन बात ।

विराट का बोझ

मैं अपने को विराट करने को
विचारो का सम्राट बनने को
छोटी बात नही कहता ,
मोटी बातो की मोटी चादर
सदा ओढे रहता ,
इन विराट बातो ने
मेरे छौने मन को
भार से आक्रात कर दिया है ,
सहजता को
मौत से भर दिया है।
युग कोई क्षणो से परे जी सका है ?
बिना किसी पात्र के
सागर कोई पी सका है !
मैं भी तो छोटी छोटी बातें जीता हू
फिर उनसे अलग रहने का आग्रह क्या ?
जो भोगा जा सकता है
उसका शब्दो से अपरिग्रह क्यो ?

मै रिक्त हू

राह मे चलते चलते
मैंने
अनायास ही
मन मे भर लिए थे
कुछ आसू कुछ मुस्कानें
और प्रतिबद्धता का सतही बोध ।

इन्ही को मैं देता रहा
अलग अलग परिवेश,
कभी उत्साह की मुस्कानें
कभी सिसकता हुआ क्लेश ।

पर मन मे बीज-से पडकर
न ये आसू पनपे
न ये मुस्कानें खिली,
राह मे बटोरा गया दद
मेहमान की तरह आया
आखिर कब तक ठहरता ?

यथास्थिति वालो से

विवशताओ से घिरा नही हरगिज रहूगा
जो सोचली है बात कल की
मैं उसी कल को यहा लाकर रहूगा ।

क्या कहा सच है आज ही
जो कल गया वह आज ही सा था
इसलिए जो आयेगा कल आज-सा होगा ,
अगर ऐसा कोई कल है [या आज है]
तो वह तुम्हारा है मेरा नहीं है ,
जिदगी है एक उभरता उत्स
अधेरे का सजित घेरा नही है ।

यह तुम्हारी चाह है
तुम्हारे आज-सा कल हो ,
क्योकि इस आज को तुम
कुडली मारे नाग-से घेरे हुए हो ,
फन की छाह से आवृत कर
अपना जहर दे
टेरे हुए हो ।

तुम्ह डर है कि
कही ये देख लेगा कल ,
तो टूट जायेगा
जहर का छल ,
जिसे एक लम्बी भयानक रात
तुमने कर दिया
वह पल ,
कल के तेज से सहज ही
जायेगा गल गल ।

क्या हुआ यदि आज
मेरा कल नही साकार दिखता,
धुधलाया हुआ है कुछ
पूरा नही आकार दिखता,
वह कुछ दूर है
उसे कुछ निकट आने दो,
प्रयासो से उसे कुछ निखर जाने दो।

वही कल का सत्य तुम्हारा
मर रहा है आज,
लो सुनो
साकार होते हुए
उस कल की आवाज!

नियोजित

लगातार चलना
मेरी नियति है
एक आदत है
विवशता है ,
चलना एक शिकजा है
जितना मैं चलता हू
उतना ही कसता है ।

पहले मैं चलता था
गली - गली
डगर - डगर
गाव - गाव
नगर - नगर ,
जहा देखता ठडी छाव
सुस्ताता था ,
कही ऊब उठता था
तो मस्ती मे
गुनगुनाता था ,
रास्ते मे आते थे अवरोध
उनसे जूझता था
नये रास्ते बूझता था ,
तब
मेरा चलना था
मेरी अपनी गति से
न कि नियति से ।

और अब
मैंने अपने लिए

रेल की पटरिया डाल ली हैं,
सभी रास्तो से वटकर
सभी मुश्किला मे हटकर
मैं एक रास्ते से लग गया हू।

यहा सब कुछ सुनिश्चित है
चलने और ठहरने का समय
विश्राम के स्थल
और गतव्य
स्थिर मतव्य
जाना पहिचाना भवितव्य,
रास्ते मे कोई हेर फेर नही
जल्दी नही देर नही
नही मैं मन से नही
किसी और के दिय सिगनल से
चलता हू ठहरता हू,
किसी तरह से सुलग गया हू
इसलिए जलता हू।

मैं—कटा हुआ पेड़

मैं कटा हुआ पेड़ नहीं
पेड़ का कटा हुआ तना हूँ,
आकार में चाहे पेड़ हो उतना हूँ।

पेड़ तो किसी तरह से
वापिस बड़ा हो सकता है
उसके जमीन में अंगद-से पाँव गड़े हैं
इसलिए साहस से खड़ा हो सकता है।

तना तो कटा है
उसे और भी कटना है
अभी भले बड़ा हो
आखिर तो उसे घटना है।

जो जमीन से उखड़ जाये
अपने बोझ से जकड़ जाये
वह आकाश को चुनौतियाँ
देगा कैसे ?
हो सकता है जी ले जैसे तैसे।

गतव्य

सशया के पार मुझको
दीखता गतव्य ,
अभी तो पार कर पाया थोडे बहुत
प्रारम्भ के कुछ मोड ,
अभी तो शेष है काफी लगानी
मुश्किलो से होड ।

इस मोड पर आकर मुझे
सशया ने घेर डाला है ,
सकल्प थोडे हिचकिचाये हैं
अरुणाभा का हुआ धूमिल उजाला है ।

मुश्किलो पर जीत मेरी
चिर सुनिश्चित है ,
सकल्प मेरे दिव्य
लक्ष्य मेरा भव्य ।

सकल्प की ये रक्तिम किरणे
उपलब्धियो के पूर्व का आभास ,
सघर्ष की चिर ज्योति से
प्रभासित हो गया भवितव्य ।

अनचाहा श्रम

मेरे चेहरे पर अनचाहे
श्रम ने अपने छोड़ दिये हैं चिह्न ।

जैसे सागर का उमड़ता ज्वार
किनारों पर करता वार ,
और विवश किनारे
ढोते हैं उस मार का
प्रबल संहार
और उनका चेहरा घुलता नहीं
कटता है !

आत्म स्वीकृति

जो सघर्ष जिये नही जाते
सिर्फ सोचे जाते है
वे अपना फल कहा पाते है ?

उनको सोचना ही वृथा है
पर सोचना एक प्रथा है
मैं उस प्रथा पर चलता हू
समझता हू रात दिन गलता हू
पर मैं बढ पाया नही हू,
जहा पर था
वही का वही हू।

अनुत्तरित प्रश्न

बात उठती तो है
पर निभती नहीं
बड़े बड़े प्रश्न करता है मन
पर रहते हैं अनुत्तरित,
रात घिरती तो है
पर घटती नहीं।

अनुत्तरित प्रश्न
कांटा-से चुभ जाते हैं
निकलते ही नहीं,
अजब मेघमाला है
उमड़ती तो है
पर छटती नहीं।

तराशना चाहता हूं
किसी तरह कांटे निकलें तो!
पर विवेक का नश्तर
उलझन भरा,
जिस से पीर बढ़ती तो है
घटती नहीं।

अनबढे चरण

कोल्हू के बैल - सा
मैं लीक पर बराबर घूमता हू,
बढ रहा हू
सोच करके झूमता हू,
चलना भले हो
किन्तु यह बढना नही हैं,
इस तरह से
सिमिट चरणा मे कही आती मही है।
यह चलना,
कोई प्रयास नही आदत है
या कि विवशता है,
जिस मे तिल ही नही
चलने वाला भी पिसता है।

रक्त और उसूल

मेरे मित्र
तुम बहुत भले हो
मन के बहुत ही उजले हो,
बात करते हो रगों में दौड़ते हुए लहू की
जो तुम्हें व मुझे
अनायास बिना मांगे बिना मांगे
विरासत में मिल गया है
जिस के मिलने से
तुम्हारा मन तुम्हारा तन
तुम्हारा जीवन
सब कुछ मुझ से एक तरह से जुड़ गया है,
सिल गया है,
यहां तक तो ठीक है
पड़ गई जो लीक है
उस लीक पर चलना ही पड़ेगा
मोम जब सुलगा है
तो उसे गलना ही पड़ेगा।

पर मेरे मित्र बात है यह
कि कुछ उसूल हैं
जो मुझे अनायास ही नहीं मिले
इन उसूलों को मैंने परखा है
उनको मैंने भोगा है
इनकी भित्ति पर मैंने सपनों को
संवारा है सजोया है,
सही है किसी और ने इनका बीज
मेरे मन में बोया है,
पर इन्हें मैंने

अपन रक्त से धोया है,
ये भी मेरे अपने हैं
मेरे वतमान हैं
कल के सपने हैं,
जो अनायास ही मिल गया
वह मिल जाने से
यदि सत्य है
तो फिर ये उसूल भी
तो अपने हैं,
फिर उन्हें झूठ कह दूं कैसे !

यह जो खून है
जिसकी पावनता की बात तुम कहते हो,
मेरे खून का पी लेना चाहें
महज इसलिए कि वह समझता है कि मेरा खून मीठा है
और मैं कमजोर हूं,
और मेरे उसूल
उसे आकर रोके,
यह कह कर कि यह झूठ है
कि मेरा खून मीठा है
और खून को खून चूसने से
टोके,
तब बताओ क्या करूं ?
यह खून भी अपना है
यह उसूल भी अपना है
अब किस रोकूं किसे टोकूं ?

यह सच है कि उसूल एक उलझन है
खून एक फार्मूला है
एक सरल सुलझन है,
जिस मे तपिश है तडपन है

एक सहज प्रवाह है
एक मीठी घटना है,
और जिसे जाना नहीं
सिर्फ माना जाता है,
पर खून जब सड़ता है
तो तराना भी जाता है,
यह दूसरी बात है
कि तुम समझो
उस में अभी भी जीवन का उत्स है,
उसे तराना नहीं
जाना चाहिए,
अभी तो मैं भी यह मानता हूं,
भेद है तो स्थिति का ही न ?
पर उमूलन खून खून को
तराशता तो है ही।

इसलिए उलझन हो तो हो
मैं खून के नाम पर
खून से खून का शोषण नहीं होने दूंगा,
अपनी हंसी बनाने के लिए
किसी को मेरे ही खून के आंसू की लड़ें
नहीं पिरोने दूंगा
मेरे खून के आंसुओं से
किसी को खून के नाम पर
अपना आंगन नहीं धोने दूंगा।

खून तो बिना मांगे मिला है मुझे
उसूल तो मेरे अपने जाये हैं,
वे मेरे रहे हैं आगे भी रहेंगे
मेरे साथ साथ सब कुछ सहेंगे
हां यह मेरा खून

जो मेरे खून ने मुझे दिया है
उसी खून पर गिरेगा
उसी खून मे जज्ब होगा,
उसे मैं कहा ले जाऊगा,
उसे यही पाया है
यही खो पाऊगा।

इस खून को साथक करेंगे
मेरे ये उसूल,
जिन उसूलो को
मेरे खून ने पाला है पोसा है,
यह झूठ है
कि मेरे खून व मेरे उसूलो मे
कोई भेद है,
इसी खून की कशिश ने
पैदा किये हैं ये उसूल,
क्या हुआ यदि खून से न आकर
खुले वातायन व अविभाज्य समीर से
मेरे मन मे समाये हो ये उसूल,
तुम भी तो मित्र इसी तरह से
आये हो,
आकर मन मे समाय हो
सही है तुम किसी और क जाये हो,
हमारे खून का स्रोत अलग हुआ तो क्या
पर इसीलिए क्या तुम पराये हो,
चाहे खून हो चाहे उसूल
मिलते तो औरो से ही हैं
पर इस से क्या होता है,
बात तो यह है
कि वे अपने हैं या नही
वे गलत हैं या सही।

मुझे भी भला लगता है
तुम्हारा यह रोष
यह गहरा आक्रोष,
ऐसा नही है
कि इस तडपन को मैंने नही जाना है,
मैंने भी उसे ठीक इन्हीं सन्दर्भों मे पहचाना है,
पर सच मानो मित्र
तुम्हारी जैसी ही तडपन से
जन्मे
उसूलो के यह उनचास पवन,
जिसे न कोई रोक सका है
यह है वही सावन,
जो निश्चय ही बरसेगा
डरो मत
इसी से हमारा खून सुवासित होगा
सरसेगा।

निरर्थक

मैं एक बीहड पवत
स्थिर कठोर
सृजन हीन,
कभी कभी
मूसलाधार वर्षा
आती है,
मुझ पर
शीतल
जल का ढेर का ढेर
बरसाती है,
मुझ मे पर
कुछ नही
समाहित होता,
जल की धार
अपनी याद के
छोडती कुछ निशान,
नहाती मेरी देह
पर नही प्राण,
कभी कभी
हरियाली
वातायान मे उडकर
थक कर मुझ पर
अनायास आकर टिकती है
गाडना चाहती है अपने पाव,
अपने लिए सिरजना चाहती है ठडी छाव,
उसी छाव
का टुकडा

मुझ पर ढलता ,
वरना
सदियों से
लगता है
मैं रहा जलता ।

निस्सीम

मेरे आगन मे
एक बगिया सहज ही उग आई है,
मैं उसका प्रहरी,
उसके चारो ओर फैलकर
सीमा बनाना चाहता हू गहरी।

चाहता हू उसकी क्यारी क्यारी
छोटी-छोटी हर एक डारी
जैसे मैं चाहू सजे,
कली कली की चटख का स्वर
मैं जिस राग मे चाहू
उसी मे बजे,
एक तरह से
मैं उसे सभी ओर से काटकर
अलग करने को तत्पर
अपनी ही मर्जी के रग भरने को आतुर।

पर
पनपती बगिया की जडें
फैलती हैं,
अनकटी धरती के भीतर
सीमा को तोड,
विकसती हुई डालिया
तोड कर प्रतिबन्ध
सहज ही लेती
मुक्त नये मोड।

पराभव

एक वह वक्त था
जब मैं खुश रहता था,
दुख अक्सर आते भी थे
तो उन्हें सुख की छांह समझ
सहज ही मैं सहता था,
मस्त दरिया की तरह बहता था।

फिर एक वक्त आया
जब मैं उदास हो आया,
अपनी तपिश औरों की तपिश का
और अधिक गहरा हो चला साया,
औरों के दुख का अपना बना
मैं जो था वह न रहा
तुम तुम और तुम बन गया।

और आज
न तो मैं
उदास,
न मुझ में वह मस्ती है
न मेरी हस्ती है।

अपने सुख को चीन्ह नहीं पाता
औरों के दुख को बीन नहीं पाता,
मैं तटस्थ हूं
कहने को बस व्यस्त हूं
सच तो यह है
मैं हो रहा अस्त हूं।

तटस्थ

मेरे सामने है
पानी का लम्बा विस्तार
पर दिखता नही
उसे ढक लिया है
'स्टेटस्को' की तलछट ने,
जिस तलछट को
मैं मान बैठा हू अंतिम सत्य
एक अपरिवर्तनीय यथार्थ।

मेरे पास
पद्मासन लगाकर
बैठे हैं मित्र,
कहते है
किनारे पर बैठकर
अपनी तलछट के माध्यम से
उन्होने जान लिया है यथार्थ
ढूढ लिया है सत्य
ऐसा है उनका कथ्य,
वार करते हैं
पुकारते है
मुझे अनवरत
धिक्कारते है,

मैं जानता हू
यह तलछट बुरी है,
कौन नही जानता
कि यह तलछट रही
तो पानी भी सड़ेगा

इस तरह स्थिरना बहुत महगा पडेगा,
तो फिर क्या किया जाय
सिफ शोर
अरे भाई
शोर करने से नही हटती काई,
भले ही
तुम तटस्थ रहकर
पुकारा करो,
और मैं तटस्थ रह कर चुप रहू
दोनो म कोई मौलिक भेद नही,
तुम्हारे स्वर मे तीव्रता है
मेरा स्वर धीमा है
इसका मुझे खेद नही,
खेद है तो यह
कि मन की गुफा से टकरा कर
लौट लौट
रह जाती है आवाज,
जहा जरूरत तो यह है कि सघर्षों के मदान मे
तुम्हारी और मेरी आवाज जुटे,
उनके अटूट स्वरो से
आलोडित हो
बज उठे साज पर साज।

अमूर्त

मन मे शक्लो की एक भीड लगी ऐसी
कि एक भी शक्ल पहचानी नही जाती ,
मन में आवाजो का शोर जुटा ऐसा
कि एक भी आवाज जानी नही जाती ,
इस भीड मे अनायास डूब गया हू
इस शोर से कभी का ऊब गया हू ,
पर यह चक्रव्यूह ऐसा कि जिसका टूटना मुश्किल
यह ऐसा प्रवाह कि जिससे छूटना मुश्किल ।

अकेला

मेरे आस पास
बहुत शोर है,
शोर के बीच
मैं अकेला हूं,
ठीक वैसे ही जैसे
अनगिनत तारों के बीच अनछुआ चांद

बीता क्षण

अलग अलग कटे कटे
पल छिन मे जीता हू ,
एक बूद अमी
एक बूद कमी
मिल गई तो क्या
मैं निरा प्यासा हू रीता हू ,
तृप्ति का बोध
तनिक नही शेष ,
प्यास की कशिश
अब नही लेश ,
ऐसा लगता है
कि मैं छिन एक बीता हू ।

उलझन

बडी बात जीता नही
तो कहू ही कहां,
रहने को नही घर
तो रहू ही कहा!

धार ही नही बही
तो फिर बहू ही कहा,
कहना और जीना
एक ही बात,
जो जी नही पाता
उस बात को गहू ही कहां!

क्षमता

मैं वह पेड
जो बाहर तो पनपता है
आकाश को छूने के लिए तडफता है,
पर जिसकी जडें कमजोर हैं
सूखती जा रही है,
जिस मे जीवन का सत्व नही
न जीने की क्षमता,
जितनी भी है
अन्दर ही अन्दर
सडती हुई सिमटा रही हैं,
इस तरह से
आकाश छूएगा कैसे,
अलग बात है
जी लेना जैसे तैसे।

वैविध्य

मैंने पहली बार
नही कही यह बात
उसको औरो ने बहुत बार कहा है
फर्क इतना है
कि औरा से थोडे अलग ढग से
मैंने उसे सहा है
बात वही होती है सत्य एक हाता है
पर फर्क यही है अलग अलग स्थितिया मे
तरह तरह से सब ने उसका भोगा है ।

अहसास

दद का अहसास
कहा नही जाता
जब तक सहा नही जाता,
जैसे किनारे पर बैठकर प्रवाह मे
बहा नही जाता।

करना ही व्यथ विचार
दद की उपलब्धि का,
दर्द सहने मे नही जब तक
हो सके प्रतिबद्धता।

मिल गया जब दद
तो प्रयास का प्रश्न क्या,
प्रतिबद्धता का दद ही ऐसा
कि एक बार मिले बाद
कहे बिना रहा नही जाता।

दिग्भ्रांत

सोचता तो बहुत हू
कि मैं कुछ करू,
जो करना चाहता हू
उसके लिए
जरूरी हो तो मरू ।

पर बात यह है
जो करने की कल्पना मन मे बनाई थी
उत्साह से जो कल्पना मैंने रचाई थी,
सशयो से भर गई वह कल्पना
पदो से कुचल धूमिल हो चली वह कल्पना,
भविष्य का और कोई आकार जोड नही पाया
आज को मैं कल की ओर मोड नही पाया,
इस से बठा हू मैं विमूढ और श्लथ
धूमिल हो चले हैं मोड धूमिल हो गये हैं पथ ।

सशय

कभी कभी मुझ को अपने पर सशय होता है
कल के सघर्षों से घबरा कर
मैं कल को भूल रहा हू यह भय होता है।

होने को तो बहुत लोग है
जो कल की बात नही सोचा करते हैं
जो कुछ मिल जाता है आज उसे भोगा करते है
पर मेरी तो मुश्किल यह है
मैंने सोच लिया था कल यह है'।

वह भी ऐसा कल
कठिन जिसे भुला सकना है,
जागति को भी जो आवृत कर देता है
ऐसा मेरा कल का सपना है,
उस साधना म सचमुच अतिरेक हो गया
उस सपने मे माना अब कुछ व्यतिरेक हो गया।

जीवत कि तु जो सपना होता है
वो एक लीक नही
उसके बढने का ढग अपना होता है,
लगता तो है जैसे
मैं समझ न पाया
इस सपने के नये उभरते रग
उसकी विविध अदाए उसके नये विकसते ढग,
उसके किसी एक ढग से मन आश्वस्त नही है
यह निर्णय बहुत कठिन है कौन गलत है कौन सही है
इसलिए मेरे सघर्षों का क्षय होता है
पर कभी कभी मुझको अपने पर सशय होता है,
कल के सघर्षों से घबरा कर
मैं कल को भूल रहा हू यह भय होता है।

लक्ष्यहीन

तुम स्टेशन का प्लेटफार्म मत बनो
जिस मे विचार व सकल्प यात्री की तरह
बतियाते हैं,
हिलते हुए रूमाल
पुछते हुए आसू
क्षणो मे विदा कराते हैं।

उस से देश तो देश
नगर नही बनता,
और तो और
घर नही बनता।

सुन्दरता

सुन्दरता
मेरे पास से निकली
जैसे मेघो मे
एक बिजली कौंधी ,
मैंने नही देखा
दिखी अपने आप ,
मैंने नही खींची
अपने आप ही पड गई थी छाप ।

कथ्य और तथ्य

कथ्य और तथ्य
दोनों मे अंतर है,
कथ्य है गगन
तो तथ्य है धरा,
कथ्य हवा मे बोओ
पनपेगा नही जरा,
कथ्य जब तथ्य से मिला
सत्य तब उभरा निखरा संवरा।

बदलना सहज नहीं

अपने आपको बदलना
सहज तो बात नहीं,
बदलने का अर्थ
यदि मन को बदलना हो वह !

मन कोई विवश दीवार तो नहीं
जिस पर जब चाहे
जो भी रंग लगा दें,
टूटी हुई बेल भी नहीं
कि जैसे तैसे
तोड़ मरोड़कर
चाहे जिस ढंग से सजा दें,
रीती हुई गिलास नहीं
इस में जो चाहें भर दें
गीली अनगढ़ी मिट्टी भी नहीं
जो चाहे रूप कर दें।

बूंद बूंद रक्त का प्रवाह बना है
हर बूंद में जिन्दगी का अर्थ सना है,
कितने ही स्रोतों से
जुटाये गये तत्व,
अनायास कैसे ही जाय निसत्व,
इस लहू में लगातार जिन्दगी ढली है
तब कहीं विकसी यह मन की कली है,
जो टूट तो सकती है
बदल नहीं सकती,
अपने स्रोत से अलग
अधिक चल नहीं सकती।

असफल विद्रोह

विद्रोह की कसी हुई मुट्ठियाँ
मन के बंद द्वार
प्रहार और अधिक तीव्र प्रहार।

भीतर नपुंसक
भयभीत आक्रोश,
आशंकाओं से सन्त्रस्त
उत्साह की प्रतीक्षित लौ,
शायद विद्रोह इस द्वार को खोलेगा,
भीतर को समाहित करेगा
भीतर और बाहर
विद्रोह ही विद्रोह का स्वर बोलेगा।

पर बाहर की ओर खुलने वाले मन के ये द्वार
कितने ही हो प्रहार
खुलते नही और अधिक जुडते,
विद्रोह ही इस से टकरा
होते व्यर्थ मुडते।

बातें

मिल बैठ कर लें बात
व्यस्तता के ये कसैले पल
व्यग्रता के ये कटीले छल
थोड़ी देर उनका छूट जाये साथ।

सोच का उलझन भरा तम - जाल
उत्तर नहीं
बस सवाल ही सवाल,
बातों के सितारों से भरें यह रात
संघर्ष बेमतलब जुटाते तिक्तता
रोज बढ़ती जा रही है रिक्तता,
कुछ तो घटेंगे लगते हुए आघात।

अप्रयोजनीय

जिन्दगी
टूटी हुई माला
कि बिखरे फूल जिसके
इस में नहीं है क्रम
न कोई तारतम्य
बस एकता का भ्रम,
न कोई व्यवस्था है
यह कैसी अवस्था है !
वह प्रयोजन
जो कि उसको एक करता था
एक क्षण व दूसरे क्षण की
दूरियों को सहज भरता था,
अब नहीं है
तुम भले कह दो जिन्दगी है
सत्य में तो एक बस
घटना यही है।

मतभेद

मतभेद
मतभेद नहीं विग्रह
विग्रह नहीं विच्छेद
मता से तो बटा जाता है
विग्रह से विच्छेद से कटा जाता है ।

मत है एक आधार
विच्छेद टूटता हुआ कगार ,
हम रह गये शेष
टूटते हुए कगार ,
न तो स्थिर कूल
न गतिमान धार ।

आकृतिया

आधार
आकार एक
आकृतिया और अधिक आकृतिया,
कौनसी आकृति
आकार का सही रूप
कौन सी मात्र चमक
कौन असल धूप ?

आकृतियों की एक घनी भीड़
आकार हुए झूठे,
विश्वास के आलम्ब
लग रहा जैसे
आधार सभी टूटे।

कुछ स्थितियां

उपेक्षा

जब सुहानी धूप चाही जाय
शीत की लहर नहीं
मिल जाय धधकती बयार,
जब एकान्त चाहा जाय
तब भीड़ तो न जुटे
पर आहटों की चल पड़े कतार।

प्रतीक्षारत को प्रतीक्षित न मिले
मनाचाहा मिले बार-बार,
जिस पर न तो आपत्ति
न किया जा सके आक्रोश
पर मन सुलगता रहे लगातार।

अवकाश

व्यस्तता की घुटन
व्यवस्था की ऊकताहट,
करीने से
सिलसिले वार चलती
जिन्दगी की थकान
झुंझलाहट।

इन से नजात मिले
मन की सतह पर आ तो गई है
पर जो मुखर नहीं हो पाई
वो बात मिले।

जो करना है
उसकी फेहरिस्त लिए दिन न उगे
जो न किया जा सकता उस से भारी
सपना से विहीन रात मिले
न कुछ करना पड़े
मन हो सूना आकाश,
जो न चाहा जाय वह न हो
ऐसा हो सब काश !

व्यथता

अमरत
पर दिशाहीन श्रम
अथ रिक्त
पर अथ का भ्रम,
मंजिल की पहचान बिना
गतिशीलता का क्रम !

मैत्री

चाही न जाय
पर अनचाही नहीं,
न हो अनायास
पर सायास भी नहीं,
न मिले तो अनपहचानी रहे
मिलने पर भी कहा जा सके
यह वही यह वही ।

मजबूरी

घधा जैसे एक ज्वार
जो फैलता ही जा रहा
ऐसा ग्रजब विस्तार ।

किनारे जो कभी साफ दिखते थे
ग्रब नहीं दिखते,
जानकारी ज्ञान सब सज गये हैं हाट पर
रोज सुबह - शाम बिकने ।
मुझ से देय लेकर मुझको
एक भस्मासुर जलाने ग्रा रहा है,
यह नहीं मालूम किंचित
क्या हो रहा है हश्र मेरा
ग्रौर होने जा रहा है ?

बरखा

नभ नयनों मे मेघ सघन
अजे हुए कजरा से ,
धरती की ग्रीवा में सज्जित
बरखा का गजरा रे ।

बरखा

नभ नयनों मे मेघ सघन
अंजे हुए कजरा से,
धरती की ग्रीवा में सज्जित
बरखा का गजरा रे।

बरसा देखी उसे मोग पाऊ,
धरती की सुवास से
सुवासित समीर को
श्रपन म भर
नय ताजे गीत गाऊ।

सान्निध्य

उधर देखो
मेघो का हाथ
पवत ने गहा
मेघ ठिठका
कुछ रुका रहा
पर उसे तो जाना था कही ग्रौर
बरसने के लिए,
धरा का गात परसने के लिए
सूखा प्रपात सरसने के लिए,
पवत-गरिमामय हो तो हो
उसके ग्रालिगन मे बधा नही
रहेगा वह,
उसका जहा होने का निश्चय है
वही रहेगा वह।

अभियान

बहुत दिनो तक नही रहगे
बन्धन मे इन्सान,
आज जमाना बदल रहा है
अपने सभी विधान।

धरती की किस्मत बदली है
नया जमाना आता है,
धरती का हर कोना कोना
उसकी बात सुनाता है।

धरती को धन-जोर जुल्म से
हमने मुक्त किया,
बञ्जर इस वत्सल धरा को
मोती-युक्त किया।

मानव के हाथो ने कल पर
छेडे नये तराने,
बागी बन इन्सान चला है
दुनिया नई बसाने।

जो कल के साजों को छेडे
वह कल का अधिकारी
जो दुनिया का रूप सवारे
उसकी दुनिया सारी।

धरती ने करवट बदली है
भाग्य बदलने वाला है,
धरती का मालिक होगा
जो धरती का रखवाला है।

मुक्ति का स्वर्णिम सवेरा

उधर नभ की अजानी वीथियो म
पर पसारे उड रहा इसान
झुक रहे नक्षत्र
खुलते आ रहे हैं राज सारे चाद तारो के,
उठ धरा से देखता हू
तो सहज दिखने
बाहुओ म बाह डाले
फैलते विस्तार
इस धरा के दो किनारो से।

दूरिया इसान को करती समर्पण
और इन ऊचाइयो के
गर्वधारी हर शिखर का झुक रहा मस्तक,
चाद के और सूरज के
पहुच प्रागण मे
उनके रहस्यो के कपाटो पर
दे रहा इसान अब दस्तक।

ज्ञान का वामन चला है
नापने को आज तीनों लोक
हर हृदय का धुल रहा अज्ञान
फैली धूप
जसे ज्ञान का आलोक।

जानता है आज तो इसान
अपने सब प्रयासो की
दिशाओ को,
तोडकर सताप की इन जड परिधियो को
विजित करता है

मनुष्य की परम्परा

युग थके थकी नही
मनुष्य की परम्परा।
पिघल चली धरा भले विदीर्ण हो गया निलय
घिरी घटा चली प्रचण्ड आंधियां लिए प्रलय,
निशा बिना प्रभात थी न साझ थी न रात थी
सृष्टि ही रुकी-थकी मिटी दिशा थमा समय।
सिमिट चला गगन भले
सिमिट चली वसुंधरा
मगर प्रलय नही सका मनुष्य को कभी हरा।

वद के पुराण के विधान मे नही रुकी
शक्ति के समक्ष भी कभी कही नही झुकी
मनुष्य की परम्परा रही सदा विकास की
मजिलें बनी भले न मजिलें मगर रुकी।
राह थक गई भले
चरण कभी नही थके
रुकी मनुष्यता नही न जी मनुष्य का भरा।

बाधकर गगन मनुष्य उड चला पमार पर
चीर वक्ष सिन्धु का बना चला नई डगर,
मनुष्य के लिए नही समय न दूरियां रही
मनुष्य योजनो चला पलक-पलक पहर पहर।
असाध्य को विजित किया
मनुष्य के प्रयास ने
खोजकर हृदय रहस्य ने मनुष्य को वरा।

सिद्धियां मनुष्य की व्यय हो सकें नही
विकास के लिए सहज शातिपूर्ण हो मही
पहरए विकास के मनुष्य ने बना दिय

शक्ति की समथ ने बाह् इस तरह गही ।
पहरुए विकास के
विनाशकाय हो गय
पद दलित हुआ मनुष्य पद दलित हुई धरा ।

पयोधि से समय ग्राज जल नही बहा रहा
रक्त से मनुष्य क जमीन को नहा रहा ,
ग्रस्थियां मनुष्य की खाद हो रही यहा
मनुष्यता मिटा समय स्वण को उगा रहा ।
सभ्यता मनुष्य की
मिट चली भले मिट
रक्त की कसौटिया स्वण को करें खरा ।

पर कभी नही सहा पाप को मनुष्य ने
डर कभी नही रहा शाप हो मनुष्य मे ,
नियति से लडा मनुष्य बावजूद हार के
राह् पर बढा मनुष्य कष्ट को बिसार के ।
शक्ति से कभी कही
झुकी नही रुकी नही
शाति की विकास की मनुष्य की परम्परा ।

ग्राज भी मनुष्य पर पयोधि रत्न वारता
वत्सला वसुन्धरा दिखा रही उदारता ,
दे रहा दिनेश तेज मेघ नीर यो भरा
भेंट स्वग ने किया थाल मोतिया भरा ।
खेत से बुने हुए
चीर से ढकी हुई
मनुष्य के लिए सदा मनुष्य की वसुधरा ।

इसलिए नही मनुष्य सष्टि को सवारता
इसलिए नही मनुष्य सभ्यता निखारता ,

मिट मनुष्य ने नही इसलिए रचा जगत
कि तुम उसे मिटा चलो वह रहे निहारता।
शत्रुओ मनुष्य के
सावधान हो रहो
तुम नही रहे मनुष्य मनुष्य तो नही मरा।

प्रश्न और प्रश्न

इतना नीर हिमालय पर है
फिर भी धरती प्यासी,
खिले चमन के चमन यहा पर
फिर भी गहन उदासी।

करते नमन चाद और सूरज
फिर भी यहा अंधेरा,
पखा झलता पवन साध
दम बैठा विवश सवेरा।

श्रम का खेत हमारा अब तक
पडा हुआ है बजर,
हाथों क हल अभी तलक भी
नही जुते धरती पर।

किसके कारण नीर नदी का
जाता निपट अकारथ,
कौन चमन के चमन लूटकर
पूरे करता स्वारथ।

कौन जलाने अपने दीपक
सबके दीप बुझाता
कौन बहारो को कदी कर
धरती को अकुलाता ?

किसने कुर्क किया है
बोलो श्रम का खेत हमारा,
किसके कारण इन हाथो का
छूटा कूल - किनारा।

वीरो से वीरान नही है
धरती वीर प्रसवनी
कष्टो मे आजाद बनानी
हमको अपनी अवनी ।

नीर सधे चमन खिले
हर दीप उभर पाय ,
मुक्त बहारो का साया
धरती पर छा जाय ।

उर्वर श्रम का खेत
हाथ के हल न रहें बेकार ,
फले धरा का भाग्य - विधायक
इन्सानो का प्यार ।

अधूरे सपन

अभी नही साकार हुए हैं सपने
रुधे हुए हैं अभी रास्ते अपने ।

नही हथौडी मजबूरी का हुक्म उठाने पाये
नही कुदाली शोषण का नाज बढान पाये
नही भूख के हाथो श्रम का वभव ही लुट जाये
पूजी के हाथो मेहनत का भाग्य नही लुट जाय
मेहनत क त्योहार शेष हैं सजने ।

भरे नाज के मोती से धरती का धानी आचल
रहे दूध से भरी धरा की हरी छातिया छलछल
मानव के कठा से मुखरित धरती गीत सुनाय
मा धरती की लज्जा जालिम नही लूटने पाय
शोषण के अवशेष शेष है मिटने ।

सृजन

एक नये निर्माण को फिर अपना अभियान हो

धरती नया सिंगार करे
लहरें लहरें खेत हरे
नये तरानों से आबाद खेत और खलिहान हो

कल पुर्जे खट खट बोलें
वैभव के घूंघट खोलें
मेहनत के उन्माद में हर मजदूर किसान हो।

हम पानी को बांध दें
और पवन को साध लें
कुदरत की मर्जी का मालिक मेहनत-कश इंसान हो।

घर खुशियों से भर जायें
सपने सभी सवर पायें
युद्ध और विध्वंस मचाना और न अब आसान हो।

सरक्षग

मेरे देश की पावन धरती पावन है ग्राकाग
कौन हिला मकता है इसके फौलादी विश्वास

यह विश्वास कि सारे खेत हरे हो
यह विश्वास कि सब खलिहान भरे हा
डारी डारी क्यारी क्यारी विहस उठे कनहास

कल की कलिया चटखें मेरे बाग मे
श्रम का सौरभ फैले ढलकर ग्राग मे
दुश्मन मिटा न पाय सुखमय कल के ये ग्राभास

सुना खुशी मे ये चहकी किलकारिया
मस्ती से रत फहरी महकी साडिया
नही मौत से कुठित हो यह जीवन वियास

उठो बचाने खेत ग्रौर खलिहान हैं
उठो बचाने मेहनत के भगवान हैं
ग्रपने बच्चो की मुस्कानें कायम रखनी हैं
यौवन की य मस्त उडानें कायम रखनी हैं

कोई मेरी इस धरती पर ग्राच लगाये ना
मेरे इस उन्मुक्त गगन मे विष फैलाये ना
लूट न पाये दुश्मन ग्रपने ये उन्नत उल्लास

मेरा देश

यह देश हमारा एक चमन
जिसकी हर केसर क्यारी में नाजों से बोया गया अमन।

उन्मुक्त पवन का अभिलाषी
उन्मुक्त गगन इसको प्यारा,
इसको न चाँद सूरज से भय
इसको पुनीत तारा तारा।
किस ओर सुनहरा कोना है
किस ओर अँधेरा कोना है,
उन्मुक्त गगन के पंछी को
अधिकार दिशा का करे चयन।

उज्ज्वल भविष्य का अन्वेषी
सबका भविष्य इसको प्यारा,
इसका पावन सबकी सीमा
पावन हर घर आँगन द्वारा।
जो हर सीमा की मर्यादा
नहीं तोड़ने आमादा,
हर एक कली चटखे-फूले
या महक उठे हरेक सहन।

कोई न पवन को बाँध सका
कोई न गगन को बाँट सका,
जो गरज गगन में घिर आई
वह किसके रोके रुकी घटा।
कोई न पवन में विष घोले
किसे मालूम किधर होले,
किस खिली कली का मन मुरझे
और कौन उजड़ जाये उपवन।

अब और नही यह सम्भव है
कि एक चमन म सोना हो,
एक चमन मे हसी खिले
और एक चमन मे रोना हो !
भवितव्य हमारा अलग नही
मझधार किनारा अलग नही,
सब कही बहार वही आती
और वही सरसता है सावन।

मुक्ति

लगर खोलो पाल तान दो
पुन मुक्ति का नव-विहान हो।

मेहनत को अवरुद्ध बनाने
तुमने ऐसी युक्ति लगाई,
लगर कसकर बता सुरक्षित
तुमन बन्दी मुक्ति बनाई।

लहरो का डर बतलाने से
मुक्ति झुकी क्या?
तूफानो से यह विकास की
नाव रुकी क्या?
जो गढती है नये मान को।

मेहनत का मस्तूल अभी तक
तना खडा है नही झुका है,
जुलमो का तूफान इसी से
सहम किनारे अभी रुका है।

जुडे मुक्ति की बाहो से
मेहनत की बाहे,
जुल्म झुके य
हा प्रशस्त वैभव की राहें।
धरती का नूतन विधान हो।

आशा

रात थोडी और लम्बी हो गई है
पर सुबह तो आयेगी ही ।

इस अंधेरे मे सही यह राह मेरी खो गई है
या निराशा पर निराशा चाह मेरी सो गई है
किन्तु मेरी प्रेरणाओ ने कभी रुकना न जाना
और मेरी साधनाओ न कभी झुकना न जाना
बात थोडी और मुश्किल हो गई है
पर सुलझ तो जायेगी ही ।

कि लम्बी रात होने का मुझे क्यो भय जरा सा भी
बला से रुक गया हो चाद नभ मे कुछ डरा सा ही
कि मेरी राह को तो प्रात खुद ही खोजता होगा
निश्चय भोर अपना साथ खुद ही खोजता होगा
भोर की किरणें जरा भरमा गई हैं
पर गगन म छायगी ही ।

आकांक्षा

न जाने पार कितने मोड़ कर आया
न जाने साथ कितने छोड़कर पाया
कि जीवन भर जिन्होंने साथ रहने की शपथ ली थी
थोड़ी दूर पर ही हाथ उनको छोड़ते पाया
क्षितिज - सी जिन्दगी की राह मेरी है।

कितनी बार पाया कि रुक गया हूं मैं
झुक गया हूं मैं कि बिलकुल चुक गया हूं मैं
कि सोचा पा चुका इतना मुझे अब और क्या करना
कि तब ही चरण मचले और पाया उठ गया हूं मैं
गगन - सी जिन्दगी की चाह मेरी है।

सकल्प

राह ज्यो बढी मेरे हौसले भी बढ चले

शमें अनेक ढल गइ अनेक चाद गल गये
ये सितारे वक्त के पाव मे मसल गये,
य समय की आधिया कुछ इस तरह चली यहा
जुटे हजार काफिले लुटे हजार काफिले।

आस के निराश के राह मे मुकाम थे
मुश्किलो के हार के बहुत से विराम थे,
जुल्म दे रहे थे गश्त खूब धूमधाम से
मगर बुलन्दिया के गीत ओठ पर उमड चले।

पाव म मेरे नही कोई विशेष बात है
मजिलो की राहियो की अलग यह जात है
हम कदम है जिन्दगी भविष्य मेरे साथ है
चूमने कदम मेरे तडफ रहे है फासले।

विकल्प

मैं सुनहला प्रात होकर
भोर का तारा बनूं क्यों ?

क्या हुआ पहिले प्रहर मे
बादली ने यदि छुपाया
क्या हुआ यदि प्रथम पल में
राह मे अवरोध आया ।

एक क्षण की तमिस्रा को नित्य करके
एक पल की हार को औचित्य करके
सुबह का विश्वास खोकर भाग्य का मारा बनूं क्या ?

क्या हुआ पहले चरण पर
मिल गये यदि शूल मुझको,
क्या हुआ यदि प्रथम पग पर
मिल गई हो भूल मुझको ।

एक लघु से शूल को अभिशाप करके
एक क्षण की भूल को चिर पाप करके
नित नये पत का प्रणेता मैं थका हारा बनूं क्या ?

अकाल

रेत रेत रेत
रेत के धूसर
रेत के खेत,
मेरे देश की
धरती पर छाया है
विनाश का प्रेत ।

इस प्रेत से लडना जरूरी है
इसके बिना बात सब अधूरी है,
जरूरत हो बदल दी जाय धारा प्रवाहो की
और धरती सीच दी जाये,
सजन के सग चालू हो
अभावा की आखें मीच दी जायें,
कौन सी उपलब्धिया जो पायी जा नही सकती
सकल्प की शक्तिया क्या ला नही सकती
सभी को सभी का प्राप्य मिल जाये
अगर हो यही अभिप्रेत ।

कवि तुलसी

राम अगर हो सके अमर
तो तेरा ही सम्बल पाकर

बालू पर किसी चितेरे ने
कुछ रेखाएं अंकित कर दीं,
उपकरण सजाये थोड़े से
थोड़ी सी सामग्री धर दी।
कल्पना चितेरी तेरी थी जिसने ये चित्र रचे सुंदर।

महलों से लाकर रघुपति को
झोंपड़ियों में आवास दिया,
राजा से रंक बना तुमने
जन के मन का विश्वास दिया।
इन जीर्ण झोंपड़ों में पलकर हो गई राम की कथा अमर।

डॉ जॉसेफ के आत्मघात पर

अनबोई धरती बोने की
चाह लिए था जो,
हाथ देखकर खाली
मन मे आह लिए था जो।

कुंठाओ की गहन तमिस्रा
जिसे मिटानी थी,
सुख वैभव की मा धरती पर
फसल उगानी थी।

अज्ञानो के तूफानो से
जूझ रहा था जो,
चिर अभाव की कठिन पहेली
बूझ रहा था जो।

देख अभावो की छाया को
ज्ञान डर गया है
आज कंठ अवरुद्ध बना
जॉसेफ मर गया है।

तुम हारे पर नही पराजय
हम स्वीकारेंगे,
हर मन मे जो सुप्त पडा
प्रतिशोध उभारेंगे।

सुख वैभव का सपन
अभी साकार बनाना है,
शान्ति मुक्ति का दीप
अभी आकार सजाना है।

कवि तुलसी

राम अगर हो सके अमर
तो तेरा ही सम्बल पाकर

बालू पर किसी चितेरे ने
कुछ रेखाए अकित कर दी,
उपकरण सजाये थोडे मे
थोडी सी सामग्री धर दी।
कल्पना चितेरी तेरी थी जि

महलो से लाकर रघुपति को
झोपडिया म आवास दिया,
राजा से रक बना तुमने
जन के मन का विश्वास दि
इन जीण झोपडा मे पलकर हो गई

युद्ध खोरो से

झुका क्षितिज का शीश दिखाए ग
ज्ञान मनुज का आज गगन म उड़
बादल - बरसा हाथ बाधकर हुक्म
उसके इगित इस धरती के भाग्य

प्रलयवाहिनी धाराओ के पथ के प
आज भाग्य के सब नियमो क इति
महलो को दे चरण नगर के नग
छवि क खेल किय कितने ही विवि

जड वाचाल हुए मूक ने प्राणो क
दिशा दिशा मे आज कलो का कल
इस धरती पर एक नया ससार उ
एक नया ही अर्थ मनुष्य के जीव

दिल की अटकी धडकन को भी
और नयन की बुझती लौ को फि
देह तराशे अग अग मे नई जिद
चकित मौत भी आज मनुज से ह

इसी ज्ञान के जाये अणु से निलय
सहज धरा क आगण म तुम प्रल
जुल्म रहे आबाद न्याय का नाम
प्यास तुम्हारी बुझे जमाना चाहे

जुरमों से भरपूर इरादे हम नही
हमको अपनी धरती मा से युगा

अनबोई है बहुत धरा
हैं भूखे इतने देश,
अभी नहीं नि शेष हुए हैं
इस धरती के क्लेश।

ज्ञान पडा है सुप्त
मनो मे घोर अधेरा है,
जड विश्वासो की कुठा का
मन मे डेरा है।

सघर्षो का मग कहीं यह
यहीं नहीं रुक जाय,
नहीं ज्ञान की पावन गरिमा
का मस्तक झुक जाय।

तुमने मर कर आज
सभी को फिर ललकारा है,
सघर्षों की बुझती लौ को
पुन उभारा है।

सौगध तुम्हारी धर्म - युद्ध
यह नहीं रुकेगा
शोषण का परचम टूटेगा
और जुल्म का शीश झुकेगा।

स्व जॉनिक भारतीय कृषि व विज्ञान अनुसधान सस्थान के अधिकारी थे, जि होंने फासी लगाकर आत्महत्या कर ली थी।

युद्ध खोरो से

झुका क्षितिज का शीश दिखाए गईं कभी की हार
ज्ञान मनुज का आज गगन मे उडता पख पसार
बादल - बरखा हाथ बाधकर हुक्म बजाते हैं
उसके इगित इस धरती के भाग्य बनाते हैं।

प्रलयवाहिनी धाराओ के पथ के पथ बदले
आज भाग्य के सब नियमो के इति और अथ बदले,
महलो को दे चरण नगर के नगर बदल डाले
छवि के खेल किये कितने ही विविध रूप ढाले।

जड वाचाल हुए मूक ने प्राणो को पाया
दिशा दिशा मे आज कलो का कलरव है छाया
इस धरती पर एक नया ससार उभर आया,
एक नया ही अर्थ मनुष्य के जीवन ने पाया।

दिल की भटकी धडकन को भी तो लौटा लाये
और नयन की बुझती लौ को फिर सुलगा जाय,
देह तराशे अग अग मे नई जिन्दगी आय
चकित मौत भी आज मनुज से हार हार जाय।

इसी शान के जाये अणु से निलय जलाओगे
सहज धरा के प्रागण मे तुम प्रलय रचाओगे,
जुल्म रहे आबाद न्याय का नाम नही रह जाय
प्यास तुम्हारी बुझे जमाना चाहे सब बह जाय।

जुल्मो से भरपूर इरादे हमे नही स्वीकार
हमको अपनी धरती मा से युगो युगों से प्यार,
अपनी मेहनत से दुनिया का खूब करें शृगार
मेहनत करने वालो का ही यह सारा ससार।

माओत्से तुग से

हिमगिरी के उन्नत मस्तक पर
कर डाला है पदाघात ,
गगा - सी पावन सलिला को
कर डाला है रक्त स्नात ।

इन खूनी कदमो को रोको
रोको अपने गलत इरादे
नही तुम्हारे गलत कदम ही
मानव का भवितव्य मिटा दे ।

तुम्हे कसम उस खू की माओ
जिसने मुक्ति सशक्त बनाई ,
अवरोधो की गहन तमिस्रा
प्राण जलाकर सहज मिटाई ।

सम साम्यो की मधुर व्यवस्था
तुम क्यो झुठलाने को आतुर
तुम जो धरती स्वर्ग बनाने
का सकल्प लिए थे सत्वर ।

सीमाओ से कही अधिक तुम
इसानो का प्यार बताते ,
वर्णों - वर्गों से विहीन ही
दुनिया का आकार जताते ।

धरती के कुछ क्षुद्र क्षेत्र हित
क्या माओ यह ताण्डव नर्तन ,
कैसा यह सीमा का झगडा
क्या युद्धो का प्रत्यावर्तन ।

चीन देश की ये सीमाएं
किस जनवादी की निर्धारित,
फिर भी इनकी चिर पावनता
क्योंकर तुमको इतनी ईप्सित ?

ये सूने हिम मण्डित पर्वत
ये सूने - सून वन - प्रांतर,
इनका मोल चुकाने बोलो
रोयें दर दर उजड़े घर घर।

सूनी हो बहनों की मांगें
सूनी हो माओं की गोदी
सूनी धरती के हित तुमने
सूनेपन की फसलें बो दीं।

इसलिए क्या माओ तुमने
पंचशील स्वीकार किया था,
सुख जीवन को मरघट कर दो
किसने यह अधिकार दिया था ?

अभी समय है अय सहोदर
संगीनों के पथ को छोड़ो,
शांति प्रसविनी भारत भू पर
अपने बढ़ते लश्कर मोड़ो।

नहीं मुड़े यदि तो मत मानो
हम तुमको रोकेंगे निश्चय,
हम जो जीवन अर्पित करते
ला सकते हैं महा प्रलय।

धरती के कुछ टुकड़ों के हित
भारत का यह युद्ध नहीं है,

माओत्से तुंग से

हिमगिरी के उन्नत मस्तक पर
कर डाला है पदाघात,
गंगा-सी पावन सलिला को
कर डाला है रक्त स्नात।

इन सूनी कदमों को रोको
रोको अपने गलत इरादे
नहीं तुम्हारे गलत कदम ही
मानव का भवितव्य मिटा दे।

तुम्हें कसम उस खू की माओ
जिसने मुक्ति सशक्त बनाई,
अवरोधों की गहन तमिस्रा
प्राण जलाकर सहज मिटाई।

सम साम्या की मधुर व्यवस्था
तुम क्यों झुठलाने को आतुर,
तुम जो धरती स्वर्ग बनाने
का संकल्प लिए थे सत्वर।

सीमाओं से कहीं अधिक तुम
इंसानों का प्यार बताते,
वर्णों-वर्गों से विहीन ही
दुनिया का आकार जताते।

धरती के कुछ क्षुद्र क्षेत्र हित
क्यों माओ यह ताण्डव नर्तन,
कैसा यह सीमा का झगड़ा
क्यों युद्धों का प्रत्यावर्तन।

अफ्रीका

सृष्टि सृजना के
विस्मृत पहले प्रहरों म
अनसधे करो से जिसे रचा
और अपूरण देख सृजना
झुझलाया विधना
काट क्रोध स अलग पूव से अलग कर दिया
वह खडित
अभिशापित
पूरब क सहज सहोदर तुम अफ्रीका।

सभी ओर की गहन उपेक्षा स प्रजनित
घनीभूत एकाकीपन म
तुमने ऐसे राज सजोय
जिनका भेद नही मिल पाता,
जल थल क टेढे - मेढे सकेत
जिन्हे पढना मुश्किल।

कुदरत का यह छुपा हुआ जादू
तुम्हारे अतमन मे
विरचता जतर - मतर,
चेतन से दूर
कही अवचेतन मे।

तुम पहने ही रहे
कुरूपता का छली वेष
व्यग्य भयानकता पर करने,
भय की सहज विजय करने को
तुम तो स्वय हो गये भयानक,
घोर अगोचर अफ्रीका

भारत का सम्मान सजाती
सीमा उसकी पुण्यमई है।

शांति मुक्ति की पुन पताका
इस धरती पर हम फहरायेंगे,
सुख वैभव की मा धरती पर
हम फिर फसलें सरसायेंगे।

पथ से भ्रष्ट नही होते हम
जो चिर पावन मूल्य विधायक,
नही शक्ति से कभी झुकगा
भारत जन मन गण अधिनायक।

अफ्रीका

सृष्टि सजना के
विस्मित पहले प्रहरों में
अनसधे करों से जिसे रचा
और अपूरण देख सजना
झुंझलाया विधना
काट क्रोध से अलग पूर्व से अलग कर दिया
वह खंडित
अभिशापित
पूरब के सहज सहोदर तुम अफ्रीका।

सभी ओर की गहन उपेक्षा से प्रजनित
घनीभूत एकाकीपन में
तुमने ऐसे राज सजोये
जिनका भेद नहीं मिल पाता,
जल थल के टेढ़े-मेढ़े संकेत
जिन्हें पढ़ना मुश्किल।

कुदरत का यह छुपा हुआ जादू
तुम्हारे अंतमन में
विरचता जंतर-मंतर,
चेतन से दूर
वहीं अवचेतन में।

तुम पहने ही रहे
कुरूपता का छद्मी वेष
व्यंग्य भयानकता पर करने,
भय को सहज विजय करने को
तुम तो स्वयं हो गये भयानक,
घोर अगोचर अफ्रीका

इसीलिए तो सदा प्रताडित
अन पहचानी रही तुम्हारी मानवता ,
पद दलित तुम्हे किया बधिको न
जो अधिक तुम्हारे हिंस्र भेडिया से भी हिंसक ,
जिनका गर्व अधिक अथा है
तुमको घेरे अधकार से ।

सभ्या की दानवी पिपासा
ने नग्न नत्य कर
तुम्हे पी लिया ,
तुम रोये तो कठ रुद्ध कर दिया
और वनो की सघन - पक्तिया
अश्रु रक्त से स्नात हो गइ ,
लुटेरा क बूटो की कीला ने
छाडे अमिट चिह्न
तुम्हारी अभिशापित
इतिहासो की राहो पर ।

उधर उदधि के पार
नगर नगर म ग्राम ग्राम मे
गुजित गिर्जो के घटा क मधु स्वर ,
मा की ममतामयी बाह म
सुनने लोरी के गीत सुहाने
स्वप्निल शिशु
कवि मनीषी गीत गा रहे सुदरता क ।

आज डूबते सूरज की घुटती किरणो स आच्छादित
पश्चिमी क्षितिज ,
घुटता दम
अधकार का दत्य
मरणासन्न दिवस का मृत्यु गीत गा रहा ।

आओ तुम
ओ भाग्य-विधायक घड़िया के कवि
इस पद-दलित
अबला अफ्रीकी भूमि से
क्षमा माँग लो
होने दो यह शब्द क्षमा के
अन्तिम स्वर,
रोग ग्रस्त महा द्वीप के
स्वप्नाविष्ट चीत्कार में।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की इसी शीर्षक की
कविता के अंग्रेजी संस्करण का अनुवाद

मुराद

मेरे दिल की यह छोटी सी मुराद है
कि आदम की दुनिया को आदमी चाहिए,
आला दिमाग लासानी जिगर सच्चा ईमान
और जिसकी बेताब मुट्ठियों मे कशिश भरी हो।

ऐसा इसान जिसे ओहदे का रश्क मुर्दा न बना दे
ऐसा इसान जिसे हुकूमत का सितम झुका न सके,
ऐसा इसान जिसके अपने खयाल अपनी औकात हो
जिसके दिल मे दिलेरी औ' मन म लगन हो
जिसका अदब हो जिसकी आबरू हो
जिसकी जुबान का एतबार हो।

ऐसा इसान जो गुमराह करने वाले रहनुमा से लोहा ले सके
रहनुमा के अहमक चापलूसो को ठुकरा सके
अधी रैयत क सडे विश्वासो के बीच रहकर भी
जो कीचड और कोहरे से ऊपर हो
आफताब की तरह तेज औ चमकता हुआ
बुलद और बेदाग।

आज आदम की दुनिया मे आदमी नही है
ऊचे ऊचे ओहदे और करतब छोटे,
नाम रोशन और करतूतें काली
परले दर्जे की खुदगर्जी और सेवा का बहाना।

दौलत की रोशनी मे दिल बुझ गया है
सिक्कों की खन खन मे धडकन खो गई है,
आजादी के जश्न म आजाद रो रहे हैं
जुल्मो की हुकूमत है इसाफ सो रहा है